'प्रताप पत्र-पुष्प' की चौथी पुस्तक

# स्वाधीनता के पुजारी

भूदेव विद्यालङ्कार

प्रकाशक,
प्रताप कार्य्यालय, कानपुर।

प्रथम संस्करण २०००
सन् १९२५ ई०
मूल्य १।)

# 'प्रताप पत्र-पुष्प'

इस पुस्तक-माला में एक वर्ष के भीतर, कमसे कम १२ पुस्तकें प्रकाशित की जायंगी। 'प्रताप पत्र-पुष्प' के ग्राहक रजिस्टर में प्रताप के नये और पुराने पूरे साल के जो ग्राहक अभी से नाम लिखा लेंगे, उन्हें, जब तक वे 'प्रताप' के ग्राहक बने रहेंगे, तब तक पौने मूल्य पर किताबें दी जायंगी। ग्राहक रजिस्टर में नाम लिखाने के लिए, किसी फीस के देने की आवश्यकता नहीं है। शीघ्र ही 'प्रताप पत्र-पुष्प' के ग्राहकों में नाम लिखाइये ये पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं :—

(१) गुलामी का नशा—युगान्तरकारी असहयोग आन्दोलन का, मौलिक नाटक के रूप में जीता जागता चित्र। मूल्य ।≡)

(२) देशभक्त मेक्स्विनी—सशस्त्र स्वयं सेवकों का संगठनकर देश में महाक्रांति का बीज बोते हुए, अंग्रेजों के जेलखाने में ७३ दिन के घोर उपवास में प्राण त्यागने वाले प्रसिद्ध आयरिश देशभक्त का जीवन-चरित्र मू० ।)

(३) तपस्विनी पार्वती देवी—असहयोग के युग में गाँव गाँव और शहर शहर में स्वराज्य का सन्देश पहुँचाने के अपराध में २ वर्ष की कड़ी कैद की सजा पाई हुई तपस्विनी पार्वती देवी की जेल कहानी। मूल्य ≡)

(४) स्वाधीनता के पुजारी—सैकड़ों वर्षों के कठिन प्रयत्नों के बाद रूस की जारशाही का तख्त उलट देने वाले प्रसिद्ध क्रांतिकारियों के आत्म-चरित्रों का रोमाञ्चकारी वर्णन। १३ चित्र २२६ पृष्ठ, मू० १)

ये पुस्तकें शीघ्र ही प्रकाशित होंगी :—

हिन्दोस्तान गुलाम कैसे बना ?—अर्थात् ब्रिटिश इण्डिया कम्पनी के पञ्जे में भारतवर्ष के फँसने की पाप कहानी, एक अंग्रेज़ की जबानी। इस पुस्तक में अंग्रेज़ी राज के कारनामों का सच्चा चित्र खींचा गया है।

क्रान्तिकारी राजकुमार—रूस के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी प्रिंस क्रोपटकिन का विस्तृत जीवन चरित्र।

अनादृता उर्मिला—श्रीयुत 'नवीन' का एक काव्यग्रन्थ।

पुस्तकों के मिलने का पता—

**मैनेजर, 'प्रताप' कार्यालय कानपुर।**

# प्राक्कथन



क्रान्ति कोई अभूतपूर्व बात नहीं है। किन्तु, रूस की क्रान्ति इस बीसवीं सदी में एक अपूर्व घटना होगई है। रूस की लाल क्रान्ति अभी कल की बात है। रूसी वायुमण्डल से उसका गर्दो गुबार अभी भली प्रकार साफ भी नहीं हो पाया है। इंग्लैंड की छाती तो अभी तक उसी प्रभाव से धड़क रही है। यों तो रूसी क्रान्ति की चिनगारियाँ भूमण्डल भर में फैली हुई हैं, किन्तु परतंत्र राष्ट्रों का वायुमण्डल उनसे कुछ अद्भुत रूप से चमक उठा है। रूस ने संसार की सामयिक, राजनैतिक तथा सामाजिक प्रगति में जो धक्का लगाया है, और उससे जो परिस्थिति उत्पन्न होगई है, वह आँखें रखने वालों से छिपी नहीं है। अनतिदूर भविष्य में ही संसार करवट लेने वाला है। किस करवट ऊँट बैठेगा, यह कहना कठिन है। पर, इतना तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि दूसरे को परतंत्रता की बेड़ियों में बाँध कर अमन-चैन की बंशी बजाने वालों को अब सुख की नींद सोना असम्भव होजायगा। स्वतंत्रता की चाह ने संसार में आज तक सैकड़ों क्रान्तियाँ की हैं, और आज भी उनका होना असम्भव नहीं है। रूस में अढ़ाई-तीन सौ वर्षों से जो महा नरमेध हो रहा था, और जो ज़ार और ज़ारशाही की पूर्णाहुति के साथ ही समाप्त हुआ, वह भी स्वतंत्रता के लिए ही हुआ था। वास्तव में स्वतंत्रता जीवन की ज्योति है। और विश्व का आधार है। स्वतंत्रता वीरों का सिंहनाद है। इतिहास की विजय-वैजयन्ती पर वीरों के हाथों से कृपाण द्वारा लिखी गई अमिट घोषणा है। इसकी मादकता, मोहकता और

चाह ही संसार में क्रान्ति का कारण है। प्राणी मात्र और विश्व के समस्त जीवित राष्ट्र इसे ही अपनाने के लिए अहर्निश चिन्तित रहते हैं। संसार में जितने महायुद्ध और क्रान्तियाँ हुई हैं, वे सब इन्हीं चार अक्षरों के लिए। कोई स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए और कोई उसकी रक्षा के लिए। स्वतंत्रता के नाम पर खून का बहना उतना आश्चर्यजनक नहीं, जितना खून का न बहना।

रूस में रक्तपात हुआ, और अढ़ाई-तीन सौ वर्ष तक लगातार होता रहा। परतंत्रता के महापाप का इतना घोर प्रायश्चित अब तक शायद ही किसी देश को करना पड़ा हो। इस विकट साधना में रूस को स्वतंत्रता की वेदी पर अपने अगणित हृदय के टुकड़ों की भेंट चढ़ानी पड़ी है। भक्त-रक्त-प्रिया स्वतंत्रता देवी अपने पुजारियों के इस अनवरत कठिन त्याग से अन्त को प्रसन्न हो उठी। उसके अट्टहास मात्र से रूस के आकाश में नवयुग का अरुणोदय तथा जारशाही का नाश होगया। शक्ति और ऐश्वर्य्य से मदान्ध रूस-सम्राट जार ने अपनी निरीह प्रजा पर बड़े अमानुषिक अत्याचार किये थे। उसके क्रूर फौलादी पञ्जे ने बिलखती हुई माताओं की छाती से सुकुमार बालकों को जुदा किया, कोमलाङ्गी रमणियों को फाँसी की टिकटी पर लटका दिया, और कोड़ों की असह्य मार से सैकड़ों की चमड़ी उधेड़ दी। सहस्रों त्यागी, तपस्वी, विद्वान और आदर्श देशभक्त साइबेरिया के नरक स्वरूप जेल की काल कोठरियों में ठूंस दिये गये, जिनके चरणों की धूल के लिए लोग तरसते थे, उन्हें काल-कोठरी की असह्य यंत्रणाओं के बीच में प्राण त्यागने पड़े। प्रजा को अपने भोग-विलास की सामग्री बनाये रखने, उसे परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़े रखने, तथा उसकी उठती हुई स्वतंत्रता की इच्छा को कुचलने के लिए, जो रोमांचकारी अत्याचार रूस के

सम्राटों ने अपनी प्रजा पर किये थे, उन्हें यदि देखना हो, तो प्रस्तुत पुस्तक "स्वाधीनता के पुजारी" को पढ़ जाइये।

ज़ार और ज़ारशाही के अत्याचारों और उनसे पीड़ितों की संख्या का अनुमान करना, जिस प्रकार असम्भव है, उसी प्रकार स्वतंत्रता के नाम पर अत्याचारों के विरुद्ध झण्डा उड़ाने वालों की भी संख्या की गणना करना असम्भव है। एक से एक उज्वल चरित्र तपस्वी और त्यागी वीर तथा वीराङ्गनाएं रूस में उत्पन्न हो चुकी हैं। उन सब का जीवन-चरित्र मिलना सर्वथा असम्भव है। जिन देशभक्तों के जीवन-चरित्र पढ़ने का हमको सौभाग्य प्राप्त हुआ है, उनमें से कुछ हम अपने पाठकों की भेंट करते हैं। इन पुण्य-चरित्रनायकों ने आत्म-बलि से अपने मातृभूमि-मन्दिर में स्वतंत्रता देवी की स्थापना करके रूस की काया पलट दी थी। हमें पूर्ण आशा है कि इस देश के नवयुवकों को स्वतंत्रता के पुजारियों के इन आत्मचरित्रों से बहुत कुछ लाभ होगा।

—भूदेव



# चरित्र-सूची



# चित्र-सूची

निर्वासित देशभक्तों की मातृभूमि-वन्दना

# स्वाधीनता के पुजारी

## देश-भक्त कैथेराइन



न् १८८५ में रूस देश के अज्ञात स्थानों तथा निर्वासित राजनैतिक कैदियों के उपनिवेशों की जांच-पड़ताल के लिए "सैनचुरी मैगज़ीन" की ओर से जार्ज कैनन बाहर भेजे गये थे। अपनी उस यात्रा में वे एक उपनिवेश में पहुँचे, जहां एक स्त्री देश-निर्वासन का दण्ड भोग रही थी। अपनी 'साइबेरिया और निर्वासन-प्रणाली' (Siberia and the Exile-System) नामक पुस्तक में उस स्त्री का वर्णन करते हुए आप लिखते हैं :—"मैं और मिस्टर शैमरिन एक कमरे में बैठे हुए बातें कर रहे थे। उसी समय एक रमणी ने उस कमरे में प्रवेश किया। मैंने उठ कर उसका यथोचित सम्मान किया। इसके बाद मिस्टर शैमरिन ने परस्पर एक दूसरे का परिचय कराया। रमणी का नाम कैथेराइन ब्रेस्कोवेस्की था। उसकी उम्र उस समय लगभग ३५ वर्ष की थी। उसका विशाल मस्तक उसकी बुद्धिमत्ता और महत्ता का भलीभाँति परिचय दे रहा था। उसकी आकृति उस समय सौन्दर्य विहीन थी, पर, उस पर दृढ़ता स्पष्ट झलक रही थी

उसकी निष्कपट बातचीत और प्रगाढ़ देशभक्ति ने हम लोगों के चित्त को बलात् अपने वश में कर लिया। उसके मुख को देखने से पता लगता था कि अवश्य ही कभी उस पर अपूर्व सौन्दर्य का राज रहा होगा, पर, उस समय उसके मुख पर उन भयङ्कर कष्टों के चिह्न, जिन्हें उसने इसी उम्र में भोगा था, स्पष्ट देख पड़ते थे। उसके वे काले घने घुँघराले बाल काट डाले गये थे और उनकी जड़ों में जहाँ-तहाँ हलकी हलकी सफेदी झलकने लगी थी। यद्यपि देश निकाले के कष्टों और कैदखानों की नरक-यातनाओं ने उसके शरीर को बहुत कुछ निर्बल तथा शिथिल कर दिया था, तो भी उसके बढ़े हुए देश-प्रेम और भविष्य की आशामय सुन्दर झलक में उनसे कुछ भी कमी नहीं आई थी। उसका वीर-हृदय पहिले से कहीं अधिक वीर दिखलाई देता था। रमणी पढ़ी-लिखी और सुशिक्षिता प्रतीत होती थी, जैसा कि उसकी बातों से प्रकट हो रहा था। वह फ्रेंच, जर्मनी और अंग्रेज़ी में भली-भाँति बातचीत कर सकती थी। गाने-बजाने में भी वह दक्ष थी। इन बातों ने मेरे हृदय को उसकी रामकहानी सुनने के लिए और भी उत्सुक कर दिया था।

"वह कारा के कैदखानों में दो बार भेजी जा चुकी थी। वहाँ से लौटने पर तीसरी बार इस जनशून्य, सुनसान स्थान में पुलिस के विशेष प्रबन्ध में रखी गई थी। आस-पास सौ-सौ मीलों तक उसके साथियों का कहीं पता नहीं था। वहाँ के अधिकारी ही की देख-रेख में उसे रहना पड़ता था, सवा डालर या ४) रुपया प्रति सप्ताह खर्च के लिए उसे दिये जाते थे। उसकी चिट्ठी-पत्री सब पुलिस के मार्फत होती थी। आयु भर के लिए वह अपने देश, जाति और बन्धु-बान्धवों से पृथक कर दी गई थी! इस जन्म में फिर उनके

दर्शन की आशा नहीं थी, और मुझे तो ऐसा जान पड़ता था कि थोड़े ही वर्षों में वह सदा के लिए इन कष्टों से मुक्ति पा जायगी, और संसार के अनजाने इस बियाबान सुनसान स्थान में कलकल नादिनी सालिंगा नदी के तट ही पर उसकी कब्र बन जायगी; जिस पर दो आंसू बहाने वाला भी कोई नहा होगा।" जिस समय उस स्त्री से कैनन साहब बिदा होने लगे, उस समय उसने कहाः—

"Mr. Kennan! we may die in exile, and our children may die in exile, and our children's children may die in exile, but something will come of it at last." "अर्थात् कैनन महाशय! मातृभूमि से सैकड़ों और सहस्रों कोस दूर इन अज्ञात स्थानों में भले ही हमारी मृत्यु क्यों न हो, हमारे लड़के और लड़कों के भी लड़के मातृभूमि के बाहर इसी प्रकार क्यों न मर जायं, पर, यह निश्चित है कि हमारी यह मृत्यु व्यर्थ न जायगी; उसका कुछ न कुछ प्रतिफल अवश्य निकलेगा।" उस स्त्री के उपरोक्त शब्द मिस्टर कैनन ही के नहीं, संसार में जो सुनेगा उसके हृदय में अपना असर किये बिना नहीं रह सकते। मिस्टर कैनन के हृदय पर तो इन शब्दों की छाप ही लग गई। उनका हृदय उस देशभक्त तथा अपूर्व आशावादिनी महिला के प्रति, भक्ति और श्रद्धा से पूर्ण होगया। इन शब्दों में एक ऐसी सचाई है कि जिसे ऐतिहासिक सचाई कहा जा सकता है। इतिहास के पन्ने इसका पूर्ण रूप से समर्थन करते आये हैं।

कैथराइन का जन्म एक बहुत ऊंचे और वैभव-सम्पन्न घर में हुआ था। संसार के किसी भोग-विलास की वहाँ कमी न थी। उसके पिता रूस के प्रतिष्ठित आदमियों में से एक थे। ...चर वो ग्राम में उनकी ज़मींदारी थी। बचपन ही से उसे क्रे...

और जर्मन भाषा सिखाई गई थी। कैथेराइन की माता धार्मिक होते हुए भी पुरानी चर्च-प्रथा की अन्धभक्त न थी। वह एक सुशिक्षिता, उदार विचार वाली माता थी। उसने स्वयं ही अपनी पुत्री को पढ़ाया-लिखाया था। वह अपनी पुत्री को सदा दास-दासियों के साथ भाई-बहिन का सा व्यवहार करने की शिक्षा दिया करती थी। दीन-दुखियों के साथ सहानुभूति की शिक्षा कैथेराइन को दूध के साथ ही पिला दी गई थी। ग़रीबों को दान देने के लिए माता सदा ही उसे प्रेरणा किया करती थी। यह इसी शिक्षा का फल था कि एक दिन की साधारण सी घटना ने कैथेराइन के जीवन में एक अपूर्व परिवर्तन कर दिया। उसके भावी कार्य्य-क्षेत्र का द्वार सहसा खोल दिया। भोग-विलास के जीवन पर यवनिका गिर पड़ी, और उस १० वर्ष की बालिका ने एक विशाल कर्मक्षेत्र में पदार्पण किया।

कहते हैं, कि एक दिन बालिका कैथेराइन नये नये कपड़े पहिन कर अपने दरवाज़े पर खड़ी थी। इतने में जाड़े से ठिठुरता हुआ, भूख से व्याकुल एक ग़रीब उसके सामने आकर गिड़गिड़ाने लगा। उस साक्षात दरिद्रता की मूर्ति को देख कर कैथेराइन का कोमल हृदय टुकड़े टुकड़े होने लगा। उसकी उस करुणाजनक दृष्टि ने बालिका के कलेजे को मथ डाला। कैथेराइन उसकी वह दयनीय दशा एक क्षण भी न देख सकी। व्याकुल होकर उसने उसी समय अपने नये कपड़े उतार कर उस ग़रीब को दे दिये। माता को जिस समय यह समाचार मिला, उसने उसी समय आकर कैथेराइन से इस प्रकार बिना सोचे-समझे नये कपड़े दे डालने के कारण बहुत कुछ बुरा-भला कहा, पर, तब हो ही क्या सकता था। कपड़े दिये जा चुके थे और वह ग़रीब उन्हें लेकर चला गया था। यह

घटना यद्यपि साधारण थी, पर, उसने कैथेराइन पर जो प्रभाव डाला, उससे असाधारण होगई। उस छोटी सी बालिका का विशाल हृदय उस दीन की दशा को याद करके व्याकुल होने लगा। उसके सामने दिन रात यही प्रश्न रहता, कि देश में इतनी दरिद्रता क्यों है? बेचारे भोलेभाले लोग इस प्रकार कष्ट क्यों पारहे हैं? और इससे छुटकारे का उपाय क्या है? जिस ग़रीब को कैथेराइन ने अपने कपड़े दे डाले थे, वह एक साधारण किसान था। सरकारी कर्मचारियों और ज़मींदारों के अत्याचारों से उसकी यह दुर्दशा हुई थी। कैथेराइन को जब यह पता लगा, उसका चित्त उसी समय सरकारी कर्मचारियों की ओर से फिर गया। ऐसी ही अनेक घटनाएँ सुनते सुनते ज़मींदारों तथा पुलिस वालों से उसे बड़ी घृणा होगई। १६ वर्ष की आयु तक अपनी भाषा के साथ ही साथ उसने जर्मन, फ्रेंच और इंग्लिश आदि भाषाओं का भी अध्ययन कर लिया था। उसके यहां एक फ्रेंच और एक जर्मन दाइयाँ भी थीं, जिनके साथ बचपन ही से वह उनकी भाषा में बातचीत करना सीखती थी। इतिहास और भिन्न भिन्न देशों के यात्रियों के यात्रा-वर्णन पढ़ने में उसकी बड़ी रुचि थी। वाल्टेयर, रूसो तथा डिडरो आदि सुप्रसिद्ध लेखकों के लेखों का उसने भलीभाँति अध्ययन कर रखा था। फ्रांस की राज्यक्रान्ति तो उसे कण्ठस्थ होरही थी। ऐसी पढ़ी-लिखी होकर फिर भला वह चुप क्यों रह सकती थी, और फिर, जब कि उसे इतना विशाल और उदार हृदय मिला हो। यौवन की नई उमङ्ग में देशभक्ति के विचारों से तरंगित होकर उसने अपने ही ग्राम में एक पाठशाला खोलदी और स्वयं ही उसमें २० किसान बालकों को लेकर पढ़ाने लगी।

# किसानों पर कोड़े-बाज़ी

उस समय रूस के अशिक्षित किसानों की दशा अत्यन्त शोचनीय होरही थी। ज़मींदार उन से मनमानी हुकूमत से काम लिया करते थे। वे जिसके विरुद्ध हुए, फिर उसकी ख़ैर कहां। जिसने उनकी आज्ञा न मानी, बेगार देने से इनकार किया, उसकी ज़मीन छीन ली, खेत कटवा लिये। झूठे दोष लगा कर पुलिस के हवाले कर दिया। इसप्रकार वहां के ज़मींदार बेचारे किसानों पर बड़े बड़े अत्याचार करते थे। पुलिस से मिल कर, कौन ऐसा काम था, जो वे न करते हों। रूस में बेगार की प्रथा उस समय बड़े ज़ोरों पर थी। एक ज़बर्दस्त एक ग़रीब पर जितने अत्याचार कर सकता था, उतने इन बेचारे किसानों पर प्रतिदिन हुआ करते थे। सन् १८६१ में एक नया क़ानून ( सेर्फ़इमैन्सिपेशन ) बना, जिससे किसानों के भूमि सम्बन्धी कुछ अधिकार बढ़ाए गये। अभी तक जो किसान जिसकी ज़मींदारी में रहता और खेत जोतता-बोता था; वह उसका एक प्रकार से बिना दामों का ग़ुलाम तो बना ही होता था, पर, उसे यह विश्वास होता था, कि जिस खेत को परम्परा से वह जोत-बो रहा है, वह उसी का है। ज़मींदार उसको उस भूमि से अलग नहीं कर सकता। यदि ज़मींदार खेत को बेचना चाहे, तो किसान और उसके खेत दोनों को इकट्ठा बेच सकता है, अलग अलग नहीं। किसान अपने मालिकों से कहा करते थे:—"Mi vashi, no zemlianasha". अर्थात "We are yours but the land is ours". हम तुम्हारे हैं, पर, भूमि हमारी है। लोग इस नये ( *Serf emancipation* ) क़ानून से यह आशा लगाये हुए थे कि जो बन्धन अब उन्हें जकड़े हुए हैं, उनसे

वे मुक्त हो जायेंगे और भूमि-पतियों के पञ्जों से छुटकारा मिलेगा। पर, हुआ इसके बिलकुल विपरीत। बेचारे किसान सुख, स्वतंत्रता तथा आनन्द की आशा में थे, कि उन पर एक भारी आपत्ति का पहाड़ आपड़ा। ज़मींदारों ने किसानों से ज़बर्दस्ती उनकी मौरूसी ज़मीन छीननी आरम्भ करदी। ऊसर तथा बंजर खराब जमीनों के टुकड़े उनके नाम लिखकर उनसे कहाः—"आओ, उन ज़मीनों ही पर अपने नये कानून के अनुसार राज्य करो और मरो।" किसानों ने मौरूसी खेत छोड़ने से स्पष्ट इनकार किया, और एक स्वर से उसके विरुद्ध आवाज़ उठाई। ज़मींदारों ने, जो कि ऐसे ही अवसर की प्रतीक्षा में थे, सरकार से सहायता मांगी। एक सरकारी कर्मचारी किसानों तथा जमींदारों के झगड़े को शान्त करने के लिए वहां भेजा गया, किन्तु चांदी का जूता किसे राह पर नहीं ले आता। वह अधिकारी भी ज़मींदारों की ओर होगया। बेचारे किसानों के ऊपर घोर अत्याचार होने लगा। न्याय और शासन कौड़ियों पर बिक गया। सब फैसले किसानों के विरुद्ध जमींदारों के हक में होने लगे। मामला शान्त होने की अपेक्षा और भी बढ़ गया। राज्य-पुरुष के कामों ने स्थिति को और भी विकट बना दिया। किसान उत्तेजित हो उठे। उनका किसी प्रकार भी काबू में आना कठिन होगया। अवस्था दिन पर दिन बिगड़ने लगी। इसलिए शीघ्र ही किसानों के दमन के लिए सेना भेजी गई। सैनिकों ने अपने ढंग का न्याय और शान्ति-स्थापन करना आरम्भ कर दिया। वे घरों में घुस घुस कर बच्चों और बूढ़ों को सताने और मारने लगे, कुमारियों और सधवाओं का सतीत्व तक संकट में पड़ गया। सेना की शान्ति सर्वत्र इसी प्रकार की होती है। सेना के अत्याचारों से प्रजा और

भी उमड़ उठी। सेना वाले तो यह चाहते ही थे, कि किसान लोग किसी प्रकार उत्तेजित होकर कुछ करें, जिससे फिर वे अपना प्रचंड रूप दिखावें। कैथराइन जिस गांव में रहती थी, उसके समीप ही एक गांव के किसान बिगड़ उठे। उन्होंने अपनी ज़मीन छोड़ने से साफ इनकार कर दिया। झगड़ा बहुत बढ़ गया। पुलिस, सेना और ज़मींदारों से सताए हुए किसान अपनी बात पर अड़ गये। फिर क्या था, ज़ार के क्रूर सैनिकों को अपना वास्तविक स्वरूप दिखाने का अवसर हाथ लग गया। शांति और शासन का पैशाचिक अभिनय होने लगा। उस ग्राम के कुल किसान पकड़ लिये गये। और गांव की बीच सड़क पर एक कतार में खड़े किये गये। रोमांचकारी दृश्य दिखाई देने लगा। प्रत्येक दसवें आदमी को कतार से बाहर निकाल कर नंगा किया जाता था और फिर उस पर कोड़े लगवाये जाते थे। इस भयंकर कोड़ों की मार से अनेकों के प्राणतक निकल गये। मूर्छित और अधमरा होना तो साधारण बात थी। फिर भी किसान अपने प्रण से पीछे नहीं हटे। किसानों में कुछ परिवर्तन न देख ज़ार के वीर सैनिक खिसियाकर आपे से बाहर होगये। निदान, दो सप्ताह बाद फिर उसी प्रकार सब किसान पकड़े गये, और फिर उनकी एक पंक्ति बनाई गई। आज प्रत्येक पांचवें नम्बर वाले पर क्रूर सैनिकों के कोड़े बरसने लगे। पर, दृढ़ता भी कोई वस्तु है, किसान अपने विचार से फिर भी नहीं डिगे, इस स्थिति में कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ। तब तो सैनिकों का पारा एकदम चढ़ गया। इसलिए तीसरी बार फिर सब किसान पकड़े गये। अबकी बार प्रत्येक किसान पर कोड़े की भीषण मार पड़ी। कहते हैं, सम्पूर्ण रूस में इस प्रकार का अत्याचार ५

वर्ष तक होता रहा। सैनिकों के इस अत्याचार से चारों ओर हा-हा-कार मच गया। कैथेराइन का दिल इन हृदयद्रावक कथाओं को सुनकर उत्तेजित हो उठता था। जिस समय वह अपने पिता के सामने, जो कि अपने यहां के पंच थे, सैनिकों और जमींदारों के अत्याचारों से पीड़ित, और उनकी मार से लँगड़े, लूले हुए किसानों और विधवा स्त्रियों को विलाप करते और दुहाई देते देखती, तो उसका हृदय सौ सौ टुकड़े होजाता। जिस समय वे लोग उसके पिता से कहते थे कि उस सरकारी खरीते को एक बार फिर ध्यान से पढ़िये, शायद उसमें कुछ भूल रह गई हो, उसे सुधरवाने का प्रयत्न कीजिए। उस समय अपने पिता को निरुत्तर देख कर कैथेराइन के दिल पर वज्र सा गिर पड़ता था। उसे ज़ार-शाही पर इतना क्रोध आता था कि कहा नहीं जा सकता। वह उसी क्षण उसके समूलोच्छेद के लिए व्यग्र हो उठती थी। पर, निरुपाय होकर दिल मसोस कर रह जाती थी।

## प्रारम्भिक शिक्षा

इसी बीच में कैथेराइन को अपनी माता तथा बहिन के साथ सेन्टपीटर्सबर्ग जाने का अवसर पड़ा। मार्ग में जिस गाड़ी पर कैथेराइन जा रही थी, उसीमें एक उच्चपदस्थ राज-कर्मचारी कोई युवराज भी कहीं जा रहा था। यह युवराज साइबेरिया से अपना सरकारी काम समाप्त कर लौट रहा था। जिस डब्बे में कैथेराइन थी, सौभाग्य से वह भी उसमें जा बैठा। थोड़े ही समय के बाद सामयिक बातों पर दोनों का वार्तालाप होने लगा। कैथेराइन अभी तक एक नरमदल केसे विचार रखने वाली स्त्री थी। इन सब अत्याचारों का एक मात्र उपाय उसे सुधार (रिफार्म) ही दिखाई देता था।

पर, मुर्दा दिलों में भी आग लगा देने वाली उस युवराज की बातों से कैथेराइन के विचारों में घोर उथल-पुथल मच गई। उस युवराज की वाणी में आग सी बरसती थी। उसने कैथेराइन के दिल को किसी और ही ओर घुमा दिया। पाठको, यह युवराज कोई साधारण युवराज नहीं था, उसका नाम प्रिंस क्रोपटकिन ( Prince Kropotkin ) था, जो पीछे से क्रान्तिकारी दल का बड़ा भारी नेता हुआ। इसीलिए ज़ार के क्रोध का शिकार बना कर उसे निर्वासित किया गया था। कैथेराइन के हृदय में ज्वाला धधक रही थी। अत्याचारी और अत्याचारों से दीनों की कैसे रक्षा की जा सकती है? देश में शान्ति और सुख कैसे स्थापित किया जा सकता है, इन्हीं विचारों की उधेड़बुन में कैथेराइन का एक एक पल कट रहा था। सेन्ट पीटर्स बर्ग में पहुँचते ही वह वहाँ के देशोद्धारक नेताओं से मिली। इस बीच में उसका परिचय उन लोगों से भी हो गया, जो चुपचाप देश को इन कष्टों से उद्धार करने का प्रयत्न कर रहे थे। ये लोग छोटे छोटे गुप्त दलों में विभक्त होकर कुल देश की स्थिति को गुप्त रीति से देखने और गुप्त उपायों ही द्वारा उस स्थिति को दूर करने का यत्न करते थे। उन गुप्त सभाओं में उन दिनों एक विचार यह भी पेश था कि किसी प्रकार देश से अविद्या पिशाचिनी दूर भगाई जाय। देश के बच्चे बच्चे को प्रारम्भिक शिक्षा अवश्य मिले। स्त्रियों के लिए उच्च शिक्षा का प्रबन्ध किया जाय। कैथेराइन को ये विचार बहुत अच्छे लगे, अतः उसने उनका साथ देने का दृढ़ संकल्प कर लिया। प्रारम्भिक शिक्षा-प्रचार का काम कैथेराइन ने अपने हाथों में ले लिया। इस शिक्षा के प्रचार के लिए कैथेराइन ने सारे देश में कई वर्षों तक भ्रमण किया। स्थान-स्थान पर प्रारम्भिक शिक्षा के लिए, विशेष कर

कृषि-सम्बन्धी पाठशालाएं खोलीं । इन पाठशालाओं में जहां कृषि की उन्नति के उपाय बताए जाते थे, वहां लोगों को उनके अधिकार भी बताये जाते थे, जिससे उनमें जाग्रति और निर्भयता उत्पन्न हो। उन्हें अपनी स्थिति और अधिकारों का पूरा पूरा पता लगजाय । बेचारे किसान उन बातों से सर्वथा अनभिज्ञ थे। वे इस शिक्षा से एक दम जाग उठे । उनकी आखें खुल गईं। अन्धकार से प्रकाश में आगए। अपने पराए, भले-बुरे का उन्हें पता लगने लगा। इस यात्रा में कैथे-राइन को देश के अनेक दलों से, जो देशोद्धार के लिए कुछ भी गुप्त या प्रकट प्रयत्न कर रहे थे, मिलने का अच्छा अव-सर हाथ लगा। वह उनके विचारों से भी भलीभांति परिचित होगई। कैथेराइन के विचार यद्यपि शनैः शनैः इस समय पुष्ट हो रहे थे, पर अपना कार्य्य-क्षेत्र उसने स्थिर कर लिया था और उसी मार्ग पर वह बढ़ी चली जाती थी। इसी समय कृषि-विभाग ( Rural Board ) के लिए प्रतिनिधियों तथा स्थानीय न्यायाध्यक्ष के चुनाव का अवसर आगया। जाग्रत जनता ने इसमें अपने अधिकारों का पूरा लाभ उठाया। यह पहिला ही अवसर था, जिसमें किसानों ने स्वतन्त्र रूप से सम्मति दी और उनके सच्चे प्रतिनिधि कृषि-विभाग में पहुँचे। इस चुनाव में किसानों ने पूरा भाग लिया। उन्हें मालूम होगया था, कि उनके अधिकार क्या हैं, और उनका उपयोग कब और कैसे किया जाना चाहिये। इस चुनाव में सभी आदमी ऐसे चुने गये, जो किसानों की भलाई चाहने वाले थे। जो वास्तव में उनके प्रतिनिधि थे। बड़े बड़े धनी ज़मींदार, जो किसानों के जानी दुश्मन थे, इस चुनाव में सब हार गये । एक की भी दाल नहीं गलने पाई । अपनी इस हार से जमींदार जल उठे ।

उन्होंने और उपाय न देख कर सरकार के कान भरे। प्रतिनिधियों की झूठी शिकायतें होने लगीं। शिकायतों में और बातों के साथ यह भी लिखा जाता था कि चुने गये प्रतिनिधि वास्तव में राजनैतिक नेता हैं, और उनसे सरकार को सावधान रहना चाहिये। भविष्य में उनसे बड़ी हानि होने की सम्भावना है। रूस सरकार राजनीति के नाम से डरती थी। उसके कर्मचारियों ने केवल उन शिकायतों ही के आधार पर बिना कुछ सोचे-समझे बहुत से आदमियों को क़ैद कर दिया। किसी किसी को देश-निकाले का दण्ड दे दिया। देश-भक्त कैथेराइन को इस समय देश-निकाला तो नहीं हुआ, किन्तु, पति के साथ वह भी पुलिस की देख-रेख में रखी गई। सरकार की इस धींगाधींगी ने कैथेराइन पर एक विशेष प्रकार का प्रभाव डाला और वह स्वाभाविक ही था। उसने देखा कि जब नियमानुकूल अपने मार्ग पर चलने पर भी अन्धेर होता है, तो अब बिना इस शासन-प्रणाली का समूलनाश किये शान्ति नहीं मिल सकती। उसने सोचा कि जो लोगों के साधारण अधिकार हैं, जो उसकी दैवी सम्पत्ति है, वह भी जब बलात् उससे छीनी जा रही है तो शान्ति से बैठना अब ठीक नहीं है। अपनी सम्पत्ति और अधिकार को लुटते तथा कुचलते हुए देखना घोर पाप है। अपने स्वत्व की रक्षा करना मनुष्य का परम कर्तव्य है। अधिकारों को कुचलनेवाले को समुचित दण्ड मिलना चाहिए। रूस सरकार इस अनधिकार चेष्टा में बहुत बढ़ गई है, उसका सुधार, बिना प्रचलित शासन-प्रणाली को नाश किये, होना असम्भव है। इसलिए सब बातों को छोड़ कर सब से पहिले आपत्तियों और अनर्थों की जड़ इस शासन-प्रणाली ही को समूल नाश करना उचित है। मूल कारण के नष्ट होते ही सब स्वयं ठीक हो जायगा।

## क्रान्ति के पथ में

ज़ख्म अभी पूरा भरने और सूखने भी नहीं पाया था कि उस पर एक और चोट लग गई। सन् १८७१ के प्रसिद्ध राजनैतिक कैदियों का फैसला सुनाया गया। इस समय राजगद्दी पर द्वितीय अलक्ज़ेन्डर विराजमान थे। मिस्टर नैचाफ (Netchaeff) और उनके साथियों के भाग्य का, जिन्होंने अपने को खुल्लमखुल्ला क्रान्तिकारी उद्घोषित किया था, लोमहर्षण फैसला भी सुना दिया गया। सब के सबको साइबेरिया के कठोर कारागृहों में भेजने की आज्ञा हुई। साइबेरिया के सुनसान और भयङ्कर मैदान उन वीरों के चरण-स्पर्श से कृत-कृत्य होगये। उन देशभक्तों के कण्ठों से निकले हुए जातीय सुमधुर संगीत से साइबेरिया का वायुमण्डल गूंज उठा। रूस-सरकार ने समझा कि उसने विष-वृक्ष उखाड़ कर फेंक दिया। उसे क्या खबर थी कि इस वृक्ष की शाखाएँ जितनी ही काटी जाती हैं, उतना ही यह और फैलता है। इन वीरों के देश-निर्वासन का समाचार बिजली की तरह सारे देश में फैल गया। नवयुवक-दल में तो इस से बड़ी सनसनी फैल गई। इन लोगों से रिक्त स्थानों की शीघ्र ही पूर्ति होने लगी। घरबार छोड़ कर नवयुवकों ने झोपड़ियों में डेरा जा जमाया। वे लोग देहातों में फैल गये और प्रजा को सरकारी करतूतें बता कर उत्तेजित करने लगे। संगठन का कार्य बड़े वेग से चलने लगा। तूफान के चिन्ह स्पष्ट दिखाई देने लगे। भयङ्कर युद्ध की तैयारियां होने लगीं। कैथेराइन इस समय चुप कैसे बैठ सकती थी, उसने भी अपने पति से उस काम में योग देने के संबंधमें सम्मति ली। उसके पति ने उस काम से पूर्ण सहानुभूति प्रकट की। पर, स्वयं उस काम के करने से अनिच्छा

प्रकट की। कैथेराइन, जो विचार-स्वातन्त्र्य की उपासिका थी, अपने पति पर किसी प्रकार का भी दबाव न डाल कर, स्वयं उस मार्ग पर अग्रसर हुई। उसने अपने पति से विदा मांगी और देश को भयङ्कर सत्ता के हाथ से निकालने के लिए एक गुप्त सभा में अपना नाम लिखा लिया।

## कारागार और काल कोठरी

पाठक भूले न होंगे कि कैथेराइन एक धनाढ्य कुल की लड़की थी। उसके शरीर को सदा ही बहुमूल्य वस्त्र ढाँके रहते थे, जिसके कारण जहां भी वह जाती, किसानों की गरीब स्त्रियां उसे बड़े घर की जानकर, मिलने जुलने और साथ बैठने में हिचकिचाती थीं। इसके साथ ही उसे पुलिस के लोगों की दृष्टि से भी बचना बड़ा कठिन था। वे पढ़े-लिखे भले आदमियों को किसानों के साथ बातचीत करते देख उसके पीछे लग जाते थे। ऐसे अनेक कारणों से कैथेराइन ने अपना वेष परिवर्तन करने का निश्चय किया। अपने बहुमूल्य वस्त्र उतार कर फेंक दिये और किसानों के हाथों के कते, बुने मोटे ऊनी कपड़ों से उसने अपने शरीर को ढक लिया। इन मोटे कपड़ों में कैथेराइन की शोभा और भी बढ़ गई। किसी ने ठीक कहा है—"किमिवहि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।" ऊपर के कपड़े बदल डालने पर स्वाभाविक सौन्दर्य के कारण कैथेराइन की शोभा और भी बढ़ गई। जिसके लिए इतना सब कुछ किया गया, बहुमूल्य वस्त्र और आभूषण छोड़े, वह फिर भी वैसीही रही। निदान कैथेराइन ने अपने कोमल, सुचिक्कण मुख-मण्डल को यथाशक्ति भद्दा और खुर्दरा करने का विचार किया। तेजाब के द्वारा उसने अपने मुख और हाथों को जान-बूझ कर जहां तक भद्दा बना सकती थी, बना लिया। कहते हैं, लगभग

दो हज़ार कार्य्यकर्त्ताओं ने अपने आपको गरीब से गरीब किसानों के साथ मिलने जुलने के लिए उपरोक्त रीति से अपने सौन्दर्य्य को नष्ट कर डाला था। जिससे सौन्दर्य्य के कारण देश के काम में किसी प्रकार की बाधा न पड़े। धन्य है, देश-प्रेम, सच्चे अर्थों में तन-मन तथा धन का अर्पण इसे ही कहते हैं। वह सौन्दर्य्य, जिसके लिए संसार के स्त्री-पुरुष मरते हैं, उसे स्वाभाविक ही पाकर इस प्रकार देश पर निछावर करना रूस की स्त्रियों ही का काम था। अकेले इस एकही आदर्श से रूस की स्त्रियां अजर, अमर होगईं। यह है त्याग! यह है बलिदान! यह है तपस्या! जिसे स्वतन्त्रता की देवी चाहती है, जो इसे पूरा करता है, स्वतंत्रता देवी उसी के गले में जयमाल डालती है। अपने गरीब भाई बहिनों से मिलने-जुलने में जो बात भी बाधक सिद्ध हुई, कैथेराइन ने उसका ही नाश कर दिया और कार्य्यक्षेत्र मे उतर पड़ी। वह किस प्रकार काम करती थी, यह उसी के शब्दों में इस प्रकार वर्णित है:-"मैं दिनभर मजदूरों का मोटे से मोटा काम करती, और रात को अपना असली काम। मेरा मकान कच्चा बना हुआ था। मेरे खड़े होने भर को वह ऊंचा था। ऊपर से वह फूस से छाया हुआ था। मेरा घर सदा आदमियों, स्त्रियों और बच्चों से भरा रहता था। जिस किसान के घर में मैं रहती थी, वह बड़ा बहादुर और दृढ़ देश-भक्त था। उसके द्वारा दस-पांच और दृढ़ आदमी मेरे साथ काम करने को तैयार हो गए थे। वे लोग साइबेरिया की जेलों और कोड़ों की मारों से कभी डरने वाले न थे। लोगों को मैं देश की कथा सुनाती थी। मनुष्य के अधिकार बताती थी, और स्वतंत्रता का संदेश उनके पास पहुंचाती थी। जब वे शाम को मेरे घर पर मेरे पास इकट्ठा होते थे,

तो मैं उनसे उनके बालबच्चों और खेतों का हाल पूछती। जब वे उसे बता चुकते तो मैं उनको उनके माता, पिता, भाई, बहिन, स्त्री, पुरुष, साथी, और पतियों पर किये गये अत्याचारों की याद दिलाती। वह बेंतों की बेतहाशा दहलाने वाली मार उन्हें स्मरण कराती, असह्य पाशविक अत्याचारों से अंग-विहीन हुए लोगों की ओर उनका ध्यान खींचती, उन विधवाओं की दुर्दशा का चित्र उनके आगे खींचती, जिनके पति अत्याचारों की असह्य यंत्रणाओं को भोगते हुए इस लोक से चल बसे थे। मैं जब उनसे उनके बच्चों का हाल पूछती और पूछती कि किस प्रकार अपनी जीवन-यात्रा करते हैं, तो कोई न कोई उनमें से बोल ही उठता कि किस प्रकार अभी थोड़े दिन हुए, सर्दी में वस्त्र और भोजन के समुचित न मिलने के कारण उसका एक मात्र आंख का तारा पुत्र इस संसार से चल बसा। उनकी इन हृदय-द्रावक बातों को सुन कर मैं उन्हें समझाती, कि किस प्रकार इन कष्टों से पीछा छूट सकता है। जिस समय उनके हृदय उत्तेजित हो उठते, तो मैं उन्हें एक मात्र यही कहती कि स्वतन्त्र होने और जीने के लिए आवश्यक है कि हमारी भूमि हमारे पास हो। इसलिए मरना या जीना, पर, स्वतंत्र होना और खेतों को प्राप्त करना अत्यावश्यक है। इसके बाद अपने कपड़े के भीतर से एक कहानियों की पुस्तक निकाल कर मैं उन्हें सुनाती। यह पुस्तक हमारे दल की ओर से अपने सिद्धान्तों के प्रचार के लिए छापी जाती थी। इनमें छोटे छोटे ऐसे जीवन-चरित्र होते थे, जिनसे सुनने वालों में देश-प्रेम की उमंगें उठें। वे लोग किस प्रेम तथा भक्ति से उन्हें सुनते थे, यह देखने वाला ही जान सकता है। इस प्रकार थोड़े ही परिश्रम से बहुत ही शीघ्र २६ प्रान्तों में स्वतंत्रता की लहर

फैल गई थी। १८७४ के प्रारम्भ में प्रजातंत्रवादियों का बड़े ज़ोरों से संघटन होने लगा। देश में चारों ओर जाग्रति पैदा होगई। नगर में बड़ी बड़ी अट्टालिकाओं से लेकर झोंपड़ियों तक में क्रान्ति का ज्वाला फैल गया। क्रान्तिकारी दल ने आपस में व्यवहार करने के लिए एक गुप्त लिपि भी तैयार कर ली थी। उनका गुप्त कारबार सब उसी में होता था। औरतों ने अपने प्यारे कपड़े और जेवर तक बेच बेच कर हमारे दल की सहायता के लिए चन्दा इकट्ठा करना प्रारम्भ कर दिया। गाँव-गाँव में प्रचारक भेजे जाने लगे और काम बड़े वेग से होने लगा।"

कैथेराइन के साथ गांव में कई बार विश्वासघात हुआ था, इसलिए कैथेराइन को शहर में लौट आना पड़ा। पर, वहां भी वह बच न सकी और अन्त को गिरफ्तार हो गई। कैथेराइन ने लिखा है कि यह उसकी साइबेरिया जाने की पहली तैयारी थी। जिस जेल में उसे ले जाया गया था,उस जेल में एक कालकोठरी(Black-hole)थी। उसी में उसे डाल दिया गया। जैसेही वह उस में पहुँची,वैसेही ऊपरसे दरवाज़ा बन्द कर दिया गया। अन्दर एक दम अन्धकार का राज्य था,नीचे पहुँचने पर अपनी स्थिति को भलीभांति समझने के लिए तथा कोठरी की लम्बाई-चौड़ाई देखने को ज्योंही कैथेराइन ने अपना पैर आगे बढ़ाया, त्योंही उसका पांव रपट गया। वह जैसे तैसे बच तो गई, पर इसका कारण कुछ भी निश्चित न कर सकी। दूसरे दिन द्वार खुलने पर दुर्गन्धि का कारण भी मालूम हो गया। वहां पर ताज़ा पाखाना पड़ा था, जिस पर उसका पांव रपट पड़ा था। इसे उसने उन आदमियों ही की बदमाशी समझी जो उसे जेल में डालने आये थे। दुर्गन्धि से नाक फटी जाती थी, वहां शुद्ध पवन का प्रवेश बन्द ही

था। थोड़ी ही देर में कैथेराइन का सिर घूमने लगा। निदान वह माथा पकड़ कर एक ओर जहां कुछ घास-फूस पड़ा था, बैठ गई। उस पर बैठते ही कोई चीज़ पीठ पर बड़े ज़ोर से चुभी। उसकी पीड़ा से व्याकुल हो कर एक क्षण के लिए भी वह वहां न बैठ सकी और उसी समय खड़ी हो गई। बहुत सोचने और टटोलने पर पता लगा कि दीवार सील से एकदम तर है, इसलिए वहां, बड़े बड़े मच्छरों का राज्य है, जो अपने राज्य में किसी को आते देखते ही उस पर भीषण रूप से आक्रमण कर बैठते हैं। कैथेराइन को दुबारा बैठने की हिम्मत नहीं पड़ी। अस्तु, सारी रात कालकोठरी के बीच उसे खड़े खड़े ही काटनी पड़ी। शीघ्र ही कैथेराइन को इस कालकोठरी से निकाल कर सेन्टपीटर्सबर्ग की जेल में भेज दिया गया। वहां भी कैथेराइन को ९ फुट लम्बी और पांच फुट चौड़ी तथा सात फुट ऊँची कालकोठरी में बन्द कर दिया गया। रात का समय था। पड़े-पड़े विचार कर रही थी, कि चाहे जितने कष्ट उठाने पड़ें, पर काम रुकना नहीं चाहिए, आगे बढ़ता ही रहना चाहिए। इसी प्रकार के विचारों में वह मस्त थी, कि इतने में उसे कोई शब्द सुनाई दिया, जिसके कारण वह चौंक कर उठ बैठी।

जिस जेल में कैथेराइन बन्द थी, उसमें १०० से ऊपर और भी राजनैतिक कैदी बन्द थे। उन लोगों ने अलग रहते हुए भी एक जातीय सभा खोल रखी थी। जिसमें सब काम संकेतों द्वारा ही हुआ करते थे। उस क्लब के सभी सभासदों ने, जब वे बाहर थे, उन संकेतों का अभ्यास कर रखा था। कैथेराइन ने भी मास्को में एक बार उन संकेतों का कुछ कुछ अभ्यास किया था। पर, अब वे उसे भलीभांति याद न रहे थे। वैसे ही संकेत रात्रि में सुन कर वह चौंक कर उठ बैठी।

इतने में पहरेवाले के आने का शब्द सुनाई दिया, साथ ही संकेत-शब्द बन्द हो गया। मगर पहरेवाले के जाते ही फिर टिक,टिक,टिक,टिक सुनाई दी। रूस की लिपि में कुल३५अक्षर हैं। कैथेराइन को संकेत-शब्दों का अभ्यास नहीं रहा था, पर, वह सर्वथा उन्हें भूली नहीं थी, थोड़े ही परिश्रम से वह उनका अभ्यास कर सकती थी। इसलिए कैथेराइन ने उनका अभ्यास करना आरम्भ कर दिया। लगभग २ वर्ष तक मुकदमे की प्रतीक्षा में इस जेल में कैथेराइन को रहना पड़ा और इस बीच में वह सांकेतिक भाषा को भली भाँति जान गई। तार की तरह शीघ्रता से वह अपने साथियों से बातचीत करने लगगई। यह सब तारबरकी लोहे के एक पानी के नल के द्वारा होती थी, जो हर एक कमरे में सीधा चला गया था। इस सांकेतिक भाषा द्वारा एक कोठरी के समाचार सब लोगों तक सुगमता के साथ पहुँच जाते थे। इस जेल मे प्रति दिन जो समाचार मिलते थे, वे बड़े ही करुणा-जनक थे। जेल के कष्टों से किसी किसी को भीषण ज्वर और तपेदिक हो गया और वे बिचारे उसी मे चल बसे। किसी ने दुःखों से पीछा छुड़ाने के लिए आत्मघात कर लिया। कोई पागल हो गया। ये समाचार अक्सर सुनने मे आते थे। इन समाचारों के सुनते हुए भी सब एक दूसरे को साहस बँधाते थे। जब छोटी छोटी उम्र की लड़कियाँ अपने ऊपर किये गये पत्थर पसीजने वाले अत्याचारों को सुनातीं, कि गवाही देने और दलवालों के नाम बताने के लिए उन्हें कैसे कैसे दण्ड दिये गये हैं, तब, सब उनको यही कहकर सान्त्वना देते कि देशभक्त का, यदि जीते जी कलेजा भी निकाल लिया जाय, तब भी उसे हँसते ही रहना चाहिए। इस प्रकार वे सुकुमार बालिकायें प्रतिदिन नये उत्साह के साथ आततायियों के अत्याचार सहन

करतीं, पर, अपने दृढ़ व्रत से एक बाल भी पीछे नहीं हटती थीं। अन्त को इनके भी दिन फिरे और सन् १८७८ में इन प्रचारकों का मुकदमा पेश हुआ। कुल कैदियों में १०० के लगभग मर चुके थे, या पागल हो चुके थे, शेष १९३ रह गये थे। उनका मामला दो वर्ष बाद न्यायालय में पेश हुआ। न्याय का नाटक आरम्भ हो गया और शीघ्र ही समाप्त भी हो गया। सात जूरियों के सामने, जिन में एक किसानों का प्रतिनिधि था और ६ सरकारी आदमी थे, मामला पेश हुआ। कैथेराइन को कठोर दण्ड के साथ देश-निकाले की आज्ञा हुई, और चूँकि कैथेराइन ने इस न्याय के नाटक के होते समय अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाई थी, इसलिए उसका दण्ड पाँच वर्ष और बढ़ा दिया गया।

साइबेरिया का नाम ही दिलेरों के दिल दहलाने को पर्याप्त था, उस पर कठोर दण्ड की आज्ञा! गिलोय एक तो वैसे ही कड़वी, फिर नीम पर चढ़ी! देशभक्त कैथेराइन की आँखों के सामने साइबेरिया के साधारण जेलों के रोमाञ्चकारी दृश्य, जिन्हें उसने सुन रखा था और जिनका कुछ अनुभव उन दो वर्षों में कर चुकी थी, एक एक कर के घूम गये और उनके सहारे ही उसे अपनी कठोर यातना के भीषण दृश्य दिखाई देने लगे। पर, वह वीर रमणी उनसे किञ्चित मात्र भी विचलित नहीं हुई। प्रत्युत, साइबेरिया के उस निराशा पूर्ण सुनसान मार्ग को अपनी अभीष्ट सिद्धि का एक मात्र मार्ग समझ कर बड़े उत्साह तथा दृढ़ता के साथ वह उस पर चल पड़ी। मार्ग में जिन पड़ावों पर ठहरना पड़ता था, वह मच्छरों तथा विषैले कीड़ों से भरे होते थे। तपेदिक और विषमज्वर (टाइफाइड) के तो वे घर ही थे। वहां की दीवारें और फर्श, मरे हुए

मच्छरों और कीड़ों के खून से रंगे हुए होते थे। कमरों में धुआं भरा रहता था। पाखाने और पेशाब के बर्तनों के टूटे और खुले होने के कारण असह्य दुर्गन्धि से वहां का वायुमण्डल भरा होता था। ऐसे पड़ाव के घरों में दिन भर की थकावट के बाद जैसे तैसे रातें काटते हुए अन्त को कैथेराइन कैरा की जेल में पहुँच गई। उसे उस जेल में दस महीने तक रहना पड़ा। दस महीने रहने के बाद वह खानों के समीप ही बसाए हुए जंगली लोगों के एक उपनिवेश में भेज दी गई। फरवरी के महीने में वह वहां पहुँची, पर, उस समय भी वहां का पारा शून्य से ४५० डिग्री कम था।

## जेल से भागने का उद्योग

कैथेराइन ने वहां जैसे तैसे अपनी जेल के २ वर्ष काटे, पर, अधिक समय तक इस प्रकार रहना उसे कब पसन्द था। निदान, वहां से भागने का उपाय होने लगा। उसी बीच में सुअवसर पाकर तीन और क़ैदियों के साथ कैथेराइन भाग निकली। कैथेराइन के भागने की खबर मिलते ही कज़ाक वीर उसके पीछे छोड़ दिए गए। लगभग ६०० मील तक वह सबकी आंखें बचा कर भागती चली गई, पर सर्वथा सुरक्षित रहकर भाग निकलना अत्यन्त कठिन था। अन्त को वह फिर उनके हाथ लग गई। इस बीच में किस किस प्रकार के कष्ट इन चारों भगोड़ों को सहने पड़े, इसका वर्णन करना कठिन है। लगभग सभी दिन फाके में बिना अन्न-जल के काटने पड़े थे। पकड़े जाने के भय से रास्ता छोड़ कर अपरिचित, भयंकर जंगलों के बीच में जाना पड़ता था। रात को सरदी से प्राण निकले पड़ते थे! कैथेराइन क़ैद करके फिर कैरा-जेल में लाई गई, और वहां ४० बेंत उसकी कोमल देह पर निर्दयता पूर्वक लगाने की आज्ञा

हुई। पर, किसी कारण से बेंतों की मार से वह बच गई। कैथेराइन के कारावास के समय में ही "स्त्रियों का विष खाना" "उपवास" "आठ राजनैतिक क़ैदियों का भागना और फिर पकड़ा जाना" और निराहार रह कर आत्मघात करना आदि बड़ी बड़ी भयंकर घटनाएं जेलों में हुई थीं। इस जेल के भयङ्कर कष्टों से तंग आकर सैकड़ों ने आत्म--हत्या करने की चेष्टा की, पर सफल न होसके। कैथेराइन भी अपने कारावास के दिन ऐसी ही जेल में काट रही थी। अन्त को इस भयङ्कर जेल से कैथेराइन को मुक्ति मिली और वह रूस से और भी दूर चीन की सीमा के पास सैलङ्गिस्क प्रान्त के बुरियट गांव में पुलिस के कड़े पहरे में रखी गई। यहीं पर मिस्टर कैनन के साथ कैथेराइन की मुलाकात हुई थी। इस जेल में कैथेराइन ने अपने २३ वर्ष के कठोर दण्ड के कठोरतम ७ वर्ष काटे थे। कैथेराइन ने स्वयं लिखा है:—"यहां सरदी खूब पड़ती थी, २० से २५ डिग्री तक शून्य से नीचे पारा चला जाता था।" इतनी भीषण सरदी में कैथेराइन को अपनी कुरसी चूल्हे पर रख कर दिन भर बैठे रहना पड़ता था। किसी मनुष्य की छाया तक वहां दिखाई नहीं पड़ती थी। कभी कोई देश--निर्वासित एक-आध दिन के लिए वहां मार्ग में जाते हुए ठहराया जाता था, नहीं तो वहां सदा ही जन-शून्य रहता था। जिस मकान में कैथेराइन रखी गई थी, वह बहुत ही छोटा था। उसमें वह सीधी खड़ी तक नहीं हो सकती थी। खड़े होते ही सिर के छतसे टकरा जाने का भय था। अपनी अवस्था का वर्णन करते हुए कैथेराइन ने लिखा है:—"जिस समय एकान्त-जनित मनस्ताप और उन्माद से मैं व्याकुल हो जाती थी, तो उसके दुष्परिणामों से बचने के लिए उस बर्फीले मैदान में निकल जाती थी। घण्टों उस हिमाच्छन्न लम्बे-चौड़े

मैदान में व्याख्यान देती या ईश-प्रार्थना किया करती थी। कभी कभी उस नीरव जड़ प्रकृति को, देश भक्ति के संगीत गाकर सुनाती थी। पर,हन्त ! कभी उस संगीत के बदले किसी भी ओर से उत्साहमय करतल-ध्वनि नहीं सुनाई दी।" उन सात वर्षों के बाद कैथेराइन को साइबेरिया के एक बड़े उप-निवेश इरकुटस्क में रखा गया। उसके बाद दो-चार छोटे छोटे स्थानों में रहने के बाद १८९६ के सितम्बर महीने में २३ वर्ष की कैद काट चुकने पर कैथेराइन को अपने देश में आने की आज्ञा मिली।

रूस की सरकार ने समझा था कि २३ वर्ष की कठोर यातना एक स्त्री को सीधे रास्ते पर लाने के लिए पर्य्याप्त से अधिक है। परन्तु, उसका यह विचार ग़लत निकला। रूस की सरकार को पता लगगया कि लोहे को पीट कर और तपा कर नवाया जा सकता है, पर, मनुष्य की इच्छा और दृढ़ संकल्प को—और फिर ऐसी इच्छा या संकल्प को, जिसका लक्ष्य, स्वतंत्रता, न्याय तथा मनुष्यता की रक्षा हो, किसी प्रकार दबाया नहीं जा सकता। जिस समय कैथेराइन अपने देश में पहुँची, उस समय परि-स्थिति बहुत बदल चुकी थी। उसके सैकड़ों साथी साइबेरिया में पड़े हुए जीवन की घड़ियां गिन रहे थे। एक एक करके लगभग सभी नेता कारागारों में भेजे जा चुके थे। चारों ओर भीषण रूप से दमन-चक्र चल रहा था। फिर भी लहर में किसी प्रकार की कमी नहीं आई थी। पुराने और अनुभवी लोगों का स्थान नवयुवकों ने ले लिया था और वे नेताओं के बताए हुए मार्ग पर बड़ी तीव्र गति से बढ़ रहे थे। नवयुवकों की छोटी छोटी टुकड़ियां इधर-उधर फैल कर अपने विचा-रानुसार क्रान्ति की आग फैलाने का जी तोड़ कर प्रयत्न कर

रही थीं। कैथेराइन का शरीर जेल के कष्टों से बहुत ही जीर्ण-शीर्ण हो गया था, पर उसके मन में कुछ भी निर्बलता नहीं आई थी। प्रत्युत, उसका मन पहिले से कहीं अधिक दृढ़ हो गया था। अपने नवयुवकों को इस प्रकार काम करते देख वह कैसे शान्त रहती, और अपने देश के उन नवयुवकों का साथ कब छोड़ सकती थी। यद्यपि उसे अपने कामों का परिणाम भली भाँति ज्ञात था, तो भी वह देशोद्धार के नशे में मस्त थी। उसने तो कर्त्तव्य-पालन का सच्चा सिद्धान्त सीखा था। उसको परिणाम से क्या मतलब था? कैथेराइन ने आते ही उस चलती लहर में एक ज़बर्दस्त धक्का और लगा दिया। फिर क्या था, लहर ने और भी विकट रूप धारण कर लिया। कैथेराइन ने स्थान-स्थान पर जाकर गुप्त सभाओं का संगठन आरम्भ कर दिया। गुप्त भाषा का प्रचार किया। और अधिक से अधिक नवयुवकों को उत्तेजित किया। कैथेराइन ने स्वयं लिखा है कि जेल से लौटने पर ६ वर्ष तक रेल का डब्बा ही उसका घर हो गया था। कहीं कल कल नादिनी नदियों की तरंगों पर हिलती-डुलती नौकाएं ही उसका सभा-स्थल होतीं, जहां तारामण्डल के सिवाय उसे और कोई नहीं देख सकता था। कहीं निर्जन या सब से उपेक्षित किसानों की झोंपड़ियां और वियावान जंगल ही सभा-मण्डप होते। इन स्थानों पर लोग पहिले ही से प्रबन्ध कर रखते थे। कैथेराइन वहां चुपचाप पहुँच कर व्याख्यान देती, और चल देती थी। पुलिस कैथेराइन को पकड़ने के लिए एड़ी से चोटी तक का ज़ोर लगा रही थी, पर वह भी इन बातों से असावधान न थी। कठिन से कठिन समय पर पुलिस की आखों में धूल झोंक कर वह साफ निकल जाती थी।

इस प्रकार ६-७ वर्ष देश में घूम घूम कर काम करने पर कैथेराइन को दूसरे देशों में भी प्रचार करने की आवश्यकता मालूम हुई। इसके कई कारण थे। एक तो यह कि रूस में रह कर वह खुल्लमखुल्ला ज़ारशाही का भण्डाफोड़ नहीं कर सकती थी। दूसरे, संसार भी ज़ार की करतूतों और रूसी प्रजा की स्थिति के विषय में अन्धकार में पड़ा था। दुनियां के सामने रूस की वास्तविक स्थिति रखना एक बड़ा आवश्यक काम था। तीसरे, देश से भागे हुए या निकाले हुए या किसी प्रकार से बाहर विदेशों में गये हुए रूसियों का संघटन करना भी अत्यावश्यक था। इसलिए कैथेराइन ने विदेश-यात्रा करना निश्चित किया और सन् १९०४ में वह अमेरिका जा पहुँची। और वहां खुले तौर पर उसने रूस की अन्धकार मय स्थिति तथा ज़ार के अत्याचारों का, व्याख्यानों, लेखों द्वारा भण्डा फोड़ करना प्रारम्भ कर दिया। कैथेराइन को अंग्रेज़ी में व्याख्यान देने का भली भाँति अभ्यास न था, फिर भी उसके व्याख्यानों के लिए लोग झुके पड़ते थे। अमेरिकन लोग उसके दर्शनों को आतुर होकर दौड़ते थे। जहाँ जहाँ कैथेराइन गई, वहां वहां उसका अपूर्व स्वागत हुआ। इस यात्रा में कैथेराइन ने देश-वासियों के सहायतार्थ कई हज़ार डालर्स इकट्ठे किये। रुपये की अपेक्षा पश्चिमी संसार का ध्यान रूस की ओर खींच कर उसने एक बड़े महत्व का काम किया। १९०५ में योरुप-यात्रा समाप्त करती हुई वह अपने देश को लौट आई

इस समय कैथेराइन की आयु ६४ वर्ष की थी। उसने अपने बुढ़ापे की चिन्ता न कर के पुनः रूस में आकर सरकार के क्रोध का अनुभव करना चाहा। उसका इस प्रकार आन

बूझ कर व्याघ्र के मुंह में प्रवेश करना, हमारे पाठकों को शायद अयुक्त और बुद्धि-शून्य कार्य्य जँचे। पर, उन्हें याद रखना चाहिए कि इतिहास के पृष्ठ, संसार की असाधारण आत्माओं के असाधारण कामों ही से रंगा करते हैं। संसार में प्रेम का आकर्षण मृत्यु के भय से कहीं अधिक है। कैथेराइन की आत्मा हम सब की तरह साधारण न थी। वह ऐसी आत्मा थी, जिसे संसार की शक्तियाँ और काल की अनवरत तीव्र गति किसी प्रकार ढीला नहीं कर सकती थी। जिस प्रकार सोने की द्युति के लिए आग की आवश्यकता है, उसी प्रकार ऐसी उच्च आत्माओं की उच्चता और तेज को प्रकट करने के लिए घोर से घोर, कठोर से कठोर तप और यातनाओं की आवश्यकता होती है। यदि ऐसी आत्माएं संसार में न हों और उनको इस प्रकार कष्ट न दिये जायँ, तो "यतोधर्मस्ततो जयः" जैसे कथन झूठे हो जायँ। उन पर विश्वास करने की इच्छा ही न हो। संसार धर्म से विमुख हो जाय। धर्म और ऊंचे सिद्धान्तों की महत्ता लुप्त हो जाय। उनकी महिमा का तो तभी पता लगता है, जब घोर से घोर अत्याचार और अधर्म्म अपने सम्पूर्ण दलबल के साथ सामने खड़ा हो, और एक धर्मात्मा छोटी सी सचाई लेकर अकेला मैदान में डटा हो, और अधर्म्म पर विजय पाए। अधर्मी और अत्याचारी का सिर पैरों से कुचल दे। उसकी हुंकार मात्र से अत्याचारियों का दिल दहल जाय और वे घुटने टेकदें। कैथेराइन की आत्मा ऐसी ही आत्माओं में से थी। इसीलिए वह निर्भय होकर उस उम्र में भी मैदान से पीछे नहीं हटी, प्रत्युत, अधिक लगन से काम करती गई। ऐसे वीर किसी एक देश या जाति के नहीं होते, वे धर्म्म के अवतार होते हैं। संसार के वे रत्न हैं। जगत् की वे सम्पत्ति हैं। वह देश, वह जाति धन्य है, जिसमें ऐसी

आत्मायें हों। १९०४ के वसन्त में कैथेराइन अमेरिका पहुँची। उसके वहां पहुँचने ही चारों ओर से निमन्त्रण आने लगे। न्यूयार्क, शिकागो, फिलेडेल्फिया और बोस्टन इत्यादि बड़े-छोटे नगरों में, जहां वह जाती थी, वहीं जन-समूह उसके दर्शनों के लिए उमड़ा चला आता था। जिन्हें उसके दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता था, उन्हें उसके व्याख्यानों के अनुवाद ही पर सन्तोष करना पड़ता था। कुल योरुप में उस समय उसकी धूम थी।

३१ जनवरी सन् १९०५ ई० को बोस्टन में एक महासभा हेनरी बो० ब्लैकवेल की अध्यक्षता में हुई थी। उस विराट सभा में मेडम कैथराइन, तथा अनेक बड़े बड़े विद्वानों के रूस की स्थिति पर प्रभावशाली भाषण हुए। रूस की शासन-पद्धति के विरुद्ध उसमें अनेक प्रस्ताव पास हुए। रूस की स्थिति पर बोलते हुए सभापति ने कहा :—

'हम अमेरिका-निवासी आज रात को रूसियों के प्रति अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रकट करने के लिए यहाँ एकत्रित हुए हैं। यह सहानुभूति उनके उस प्रयत्न के लिए है, जो उन्होंने एक स्वतन्त्र प्रतिनिधि सत्तात्मक, वैध शासन-प्रणाली, न्याय, समता और स्वाधीनता के आधार पर स्थापित करने के लिए किया है और कर रहे हैं। यह कभी सम्भव नहीं, कि एक अमेरिका-निवासी जिसे कि स्वतंत्र देश के निवासी होने का गर्व है, ऐसे समय में अपने कर्त्तव्य से हिचके या च्युत हो जाय। ऐसे समय में हम उन शब्दों को दुहराना चाहते हैं, जो कि अमेरिका वासियों के लिए स्वतन्त्रता की घोषणा करते समय कहे गये थे:—

"We hold these truths to be self evident that all men are created equal; that they are endowed

by their Creator with certain inalienable rights; that among these are life, liberty, and the pursuit of happiness; that to secure these rights governments are instituted among men, deriving their just powers from the consent of the governed; that whenever any form of government becomes destructive of these ends, it is the right of the people to alter or to abolish it, and to institute a new government laying its foundation upon such principles and organizing its powers in such form as to them shall seem most likely to effect their safety and happiness.

But when a long train of abuses and usurpations, pursuing invariably the same object, evinces a design to reduce the people under absolute despotism, it is their right, it is their duty to throw off such government and to provide new guards for their future security."

अर्थात् "हम इन सत्य बातों को स्वयं सिद्ध मानते हैं कि संसार के सब मनुष्य समान हैं। प्रत्येक मनुष्य को कुछ अटल, अच्छेद्य स्वत्व प्राप्त हैं। उनमें जीवन, स्वतन्त्रता और सुख के प्राकृतिक साधन मुख्य हैं। इन्हीं स्वत्वों या जन्मसिद्ध अधिकारों की रक्षा के लिए शासनप्रणालियों या सरकारों की रचना की जाती है। शासितों की सम्मति ही से इन शासनप्रणालियों या सरकारों का आविर्भाव हुआ है। जब कोई सरकार अपने अधिकारों का दुरुपयोग करे या अपने

लक्ष्य से भ्रष्ट होजाय, तो जनता को अधिकार है कि उसे सर्वथा बदल दे या उसे एक दम मिटा कर उसके स्थान पर नई शासन-पद्धति स्थापित कर ले। उसे ऐसे नियमों तथा सिद्धान्तों पर स्थिर कर ले, जिनसे भविष्य में सुख, समृद्धि और रक्षा की वृद्धि हो। परन्तु, जब अधिक समय तक अन्याय, अत्याचार और स्वेच्छाचारिता का क्रूर शासन चलता रहे, किसी प्रकार वह शान्त न हो तो जनता को अधिकार है, और उसका यह कर्त्तव्य है कि ऐसी सरकार का या शासन प्रणाली का समूलोच्छेद करके भविष्य में अपनी रक्षा और सुख के लिए अपने रक्षक स्वयं चुन ले।"

"यह घोषणा उस समय ऐसेही नहीं कर दी गई थी। इस घोषणा पर १३ प्रान्तों के प्रतिनिधि मुखियों के हस्ताक्षर हुए थे। अपने अन्तिम राष्ट्र-विप्लव के अन्त में अमेरिका-निवासियों ने इसे अपना अन्तिम ध्येय निर्धारित तथा घोषित किया था। क्रांति के खण्डहरों ही पर हमारे राष्ट्र की नींव पड़ी थी। जो सिद्धान्त उस समय सत्य था, वह आज भी सत्य है। जो दशा आज १९०५ में सेण्टपीटर्स वर्ग तथा मास्को में है, वही १७७६ में बोस्टन और फिलेडेल्फिया में थी। उस दिन अखिल विश्व में, सदा के लिए समान रूप से, सब स्त्री-पुरुषों के लिए एक ईश्वर का भरोसा करके हम इन सिद्धान्तों के प्रचार में तन, मन और धन लगाने के लिए परस्पर प्रतिज्ञाबद्ध हुए थे।" जनरल आफ एज्यूकेशन के सम्पादक डा० ए० ई० विशिप ने, जो कि कई कारणों से वहां नहीं पहुँच सके थे, अपने सहानुभूति सूचक पत्र में लिखा था:- 'मुझे खेद है कि मैं कई कारणों से इस समारोह में सम्मिलित नहीं होसकूंगा। मैंने सन् १८८१ में रूस के ऊपर वेन्डलफिलिप का एक व्याख्यान हावर्ड में सुना था। उसकी

बिजली आज भी मेरी नस नस में दौड़ रही है। रूसी शासन वस्तुतः मनुष्यता पर कुठार है। वहाँ के निवासी आत्म-गौरव, सुख, समृद्धि और वैयक्तिक अधिकारों से वञ्चित किये जाते हैं। मेरे कानों में आज भी वेन्डलफिलिप के वे शब्द ( Accept no peace without Liberty) अर्थात् "स्वतन्त्रता के सिवाय कोई समझौता नहीं," गूंज रहे हैं। मैं उन्हें सुन रहा हूँ। मैं भी इससे कम या इससे दूसरी बात नहीं कहना चाहता और न कह ही सकता हूँ। चाहे कैम्ब्रिज के छत की प्रत्येक ईंट या खपड़े से एक एक शैतान निकल कर मेरी बात का विरोध करें। यहाँ पर वाल्टेयर के उन शब्दों को, कि अत्याचारी को कुचल डालो, दुहराने को जी चाहता है।' इसके बाद तीसरे व्याख्याता विलियम लायड गैरिजन ने कहा था:—

"संसार के नागरिक की स्थिति से मैं अपने को उन मनुष्यों में से एक गिना जाना चाहता हूँ, जो अपने जन्म पर बहुत कम घमण्ड करते हैं। इसीलिए मुझे रूस की क्रान्ति पर बहुत प्रसन्नता हुई है। टालस्टाय और ईसा के सिद्धान्त ऐसे हैं कि उनसे अन्याय के स्थान पर न्याय प्रतिष्ठित होगा। इसके अतिरिक्त यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि एक इतना बड़ा उत्तरोय राष्ट्र आज उन्हीं सिद्धान्तों पर चल रहा है, जिन पर, वाशिंगटन, लिंकन और जान ब्राइडन चले थे। यह और बात है कि अभी प्रारम्भ होने से उसमें अनेक त्रुटियाँ हैं। पराधीनता में शान्ति नहीं है। निरंकुश, उच्छृङ्खल, स्वेच्छाचारी शासक अपनी बढ़ी हुई, प्रबल अत्याचारिणी शक्ति के भरोसे पर शान्ति से महलों में सो सकते हैं। पर यह शान्ति का स्वरूप नहीं है। स्वतन्त्रता या स्वाधीनता के विकट से विकट आन्दोलन को मैं मनुष्य की पराधीनता से कहीं अधिक अच्छा समझता हूँ।

जिन्होंने मनुष्य-समाज को, उसके जन्मसिद्ध अधिकारों से वञ्चित करके उसे कुरूप बना रखा है, उनका और उनके [illegible] बल का, कैसे ही कटु और तीव्र शब्दों द्वारा, कितनी ही निर्दयता के साथ खण्डन क्यों न किया जाय, वह सर्वथा उचित ही है। उनके विरोध और बदले में जो कुछ भी किया जाय, वह उचित और अत्यावश्यक है। और इसलिए वह कर्त्तव्य है। वारसा की शान्ति की अपेक्षा नावा की अशान्ति अधिक गौरवयुक्त है। अतएव, आज मैं रूस के उन पददलित मनुष्यों तथा निर्वासित लोगों के साथ, जो रूस छोड़कर अमेरिका में आए हुए हैं, पूर्ण सहानुभूति और प्रेम-भाव प्रकट करना चाहता हूँ। हमारा अधिकार है कि हम ज़ार की इस ज़ार-शाही का विरोध करें। दक्षिणीय प्रदेशों में भी वहाँ के निवासियों की स्वतंत्रता खतरे में है। हमें इस उठते हुए विरोध या क्रान्ति के भैरव-नाद को रोकना नहीं चाहिए। हम, विदेशों में जन्म-भूमि से दूर पड़े हुए भाइयों के प्रति कान बन्द नहीं कर सकते। अत्याचारों से पिसते हुए लोगों का चीत्कार सुनना ही पड़ेगा। वहाँ के क्रूर अत्याचारी शासक जनता के आर्त्तनाद की कुछ परवाह नहीं करते। किसी देश तथा जाति की आ-वाज़ बुद्धिमान स्त्री-पुरुषों के द्वारा ही ध्वनित होती है। उनका कथन, उनकी इच्छा, उनकी माँग, देश तथा जाति की माँग होती है। यद्यपि उनकी संख्या थोड़ी ही होती है, तथापि उनका कथन, धर्म तथा न्याय का आसन होता है। उनका न्याय और धर्म्म सब ओर, सब काल, सब देशों में एक रस से व्यापक रहता है।

जिस देश में जनता के स्वत्व, प्रजा के अधिकार, कानूनी

राज-व्यवस्था द्वारा पददलित किये जाते हों, बलात् शक्ति का दुरुपयोग कर के दबाने की चेष्टा की जाती हो, वहाँ पर सुधार तथा परिवर्तन करते समय यदि उद्दण्डता से काम लेना पड़े तो उसके विरुद्ध कोई आवाज सुनी नहीं जा सकती। छापाखाना, व्याख्यान-मञ्च और पञ्चायतें ही अपने मनोगत भावों के प्रकाश करने के स्थान हैं। पर, अन्याय और अधर्म से वहाँ पर लोगों को दबाया जाता है। उनकी कलम तोड़ डाली जाती है, मुँह बन्द किये जाते हैं, यहाँ तक कि दस-पाँच को एक स्थान में एकत्रित तक नहीं होने दिया जाता। अपनी हार्दिक वेदना, मानसिक उच्छ्वास तथा उद्गारों को प्रकट करने के यही साधन हैं। पर निरंकुश रूस में छापेखाने पर कड़ी निगाह या कठोर प्रतिबन्ध ( सेन्सर ) बैठा हुआ है। सेन्टपीटर्स बर्ग की, नमी से तर-बतर बन्दी-गृह की कालकोठरियां उन लोगों के लिए खुली हैं। रूसी कैदखानों के कष्टों की समता यदि कुछ भी की जा सकती है तो पुराने समय के राक्षसी नर-पिशाचों के कृत्यों से की जा सकती है। अब यह अत्याचार, अनाचार, अधर्म और अन्याय का बोझ अधिक समय तक उठाया नहीं जा सकता। असह्य हो उठा है। इससे कितना भी अनर्थ क्यों न हो, पर, यह ज्वालामुखी फूट कर ही रहेगा। एक अमेरिकन की स्थिति से मैं रूसियों के इस बढ़ते हुए उत्साह का प्रसन्नता से स्वागत करता हूँ।"

इसके बाद श्रीमती मिसेज जूलियाहोव ने अपना प्रभाव-शाली व्याख्यान देते हुए कहा:—"रूसी लोगों का क्रान्ति करना उचित ही है। उन्हें नीच अन्याययुक्त और अमानुषिक बातों को कभी सहन नहीं करना चाहिए। उनसे कभी दबना भी नहीं चाहिए। लॉंगफ़ैलो ने एक स्थान पर कहा है:—

"मूक पशुवत् मत बनो।" रूसी लोग पशु नहीं रहे। उनकी यह जाग्रति कैसी उज्वल और महत्वपूर्ण है। बस, इस समय रूस को कुछ सच्चे नेताओं की आवश्यकता है। मेरी पुत्री से एक बार एक विदेशी जनरल ने कहा था:— 'ग्रीस के अन्तिम युद्ध में ग्रीस-निवासी शक्ति से पराजित नहीं किये गये थे, प्रत्युत नेताहीन कर दिये गये थे। इसमें रत्ती भर भी सन्देह नहीं कि वे लोग बड़े ही वीर तथा शक्तिशाली थे। पर, एक बड़ी भारी कमी थी। उनके बीच में कोई अगुआ, कोई ऐसा पुरुष जो सब को एक मार्ग पर ले जासके, सच्चा नेता नहीं था।" मुझे विश्वास है, कि जिस परमात्मा ने संसार के उद्धार के लिए ईसा को और अमेरिका के उद्धार के लिए वाशिंगटन को भेजा था, जिसने डोबेका और जोन आफ़ आर्क जैसी वीरांगनाओं को अपने देश तथा जाति के उद्धार के लिए इस संसार में जन्म दिया है, वह इस समय रूसी लोगों को भी एक ऐसा ही नेता अवश्य देगा।"

इस प्रकार, उस विराट सभा में एक से एक बढ़कर महत्वपूर्ण व्याख्यान हुए। अन्त में उन सब व्याख्यानों के परिणाम स्वरूप उस दिन जो प्रस्ताव अमेरिका-निवासियों ने पास किये, उनका उल्लेख करना आवश्यक है।

सर्व सम्मति से उस महासभा ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किये:—

१—चूँकि रूस ऐसे विशाल भू-भाग पर मनुष्य के जन्मसिद्ध, अधिकारों की रक्षा के लिए रक्त बहाया जारहा है, २—चूँकि ज़ार की सरकार पीड़ित जनता की उचित मांगों का उत्तर सदा की भांति आज भी गोली और तलवार से दे रही है। ३—चूँकि ज़ार की शासन-व्यवस्था सभ्य संसार की व्यवस्थाओं से सर्वथा विपरीत और अनियमित है।

इसलिए इस गौरवपूर्ण देश के नागरिकों की यह आन्तरिक और प्रबल अभिलाषा है कि रूस की पददलित जनता दासता के कठोर बन्धन से मुक्त होकर राजनैतिक स्वतन्त्रता का उपभोग करे, हम बोस्टन निवासी अपना यह कर्त्तव्य समझते हैं कि रूसी क्रान्तिकारियों के प्रति पूर्ण सहानुभूति प्रकट करें और यथाशक्ति हमसे जो कुछ बन सके, उनकी सहायता करें। हम आशा करते हैं कि बिना किसी प्रकार के राष्ट्र-विप्लव के उनकी विजय होगी। हम रूस के उन पाशविक व्यवहारों के प्रति घोर घृणा प्रकट करते हैं, जिन्हें केवल रूस का निरंकुश शासन ही कर सकता है। और हमारी दृढ़ धारणा है कि वाणी की स्वतन्त्रता के लिए जो रक्तपात हुआ है, उसका कुल उत्तरदायित्व सरकार के उन निर्लज्ज तथा निर्दय किराये के टट्टुओं ही पर है, जिन्होंने ऐसा किया है। बोस्टन-निवासी अपनी सार्वजनिक सभा में उपरोक्त प्रस्तावों को सहर्ष स्वीकार करते हैं।

बस, पाठक इतने ही से सब स्थिति समझ लें। और कैथेराइन की विदेश-यात्रा की सफलता का अनुमान भी करलें। कैथेराइन का अमेरिका जाना पूर्णतः सफल हुआ। उसने वहां ऐसी अनेक संस्थाएँ संगठित कीं, जो रूस के क्रान्तिकारियों और उनके आन्दोलन को धनादि से सहायता पहुँचाती रहती थीं। स्वयं १० हज़ार डालर का चन्दा करके उसने रूस को भेजा था। कैथेराइन ने जो सङ्गठन का काम किया, उसके कारण उसने देश की अपूर्व सेवा की।

मार्च सन् १९०५ में कैथेराइन अमेरिका से योरुप को लौट पड़ी और उसने पुनः रूस में आने का दृढ़ संकल्प किया। ६४ वर्ष की अवस्था में कुल योरुप में रूस के विरुद्ध आग लगा कर, संसार में ज़ारशाही की पोल खोल कर, फिर

उसने रूस में आकर अपने साथियों के साथ काम करने की ठानी और रूस की ओर चल पड़ी। २३ वर्ष का साइबेरिया का बन्दी-गृह, उसे अभी भूला न था। वहां के कष्टों के चिन्ह अभी उसके मुख-मण्डल से दूर भी नहीं हो पाये थे, और इस बार जाने का क्या परिणाम हो सकता है, उससे भी वह अनभिज्ञ न थी। पर, फिर भी देश प्रेम, स्वतन्त्रता और स्वाधीनता की डोरी में खिंची हुई वह रूस को चल ही दी।

रूस मे पहुँचते ही उसने अपना कार्य्य प्रारम्भ कर दिया। लगभग २ वर्ष तक जैसे भी बना, वह सरकार की आंख बचा कर काम करती रही। अन्त को १९०८ की जनवरी में वह फिर चौथी बार रूस-सरकार का शिकार हो गई। इस बार वह पीटर के किले मे बन्द कर दी गई।

सन् १९१७ में जब रूस में प्रजातंत्र या साम्यवाद की स्थापना होने जा रही थी, बिचारा ज़ार सपरिवार इस संसार से सदा के लिए उठा दिया जा चुका था, उस समय एक रूसी ने लिखा :—"साइबेरिया के जेलों में ज़ार की करतूत से नरक-यातना भोगने वाले सब राजनैतिक कैदी छोड़ दिये गये थे, और वे सब प्रेट्रोग्रेड को लौट आये थे। उनमें एक वृद्धा जर्जर-देहारमणी मैडम ब्रेस्को वस्की कैथेराइन भी थी। उन सब में सब से बुड्ढी वही क्रान्तिकारिणी थी। यह उस समय से क्रान्तिकारियों में काम करती थी, जब क्रान्तिकारी लोग "निहिलिस्ट"कहलाते थे। उसी समय कैथेराइन का नाम "रूसी क्रान्ति की दादी" पड़ा था। उसके इस नाम में रूसियों की अनन्त श्रद्धा का प्रत्यक्ष दर्शन हो रहा है। उसके आने का समाचार सुन कर उसके स्वागत के लिए पेट्रोग्रेड में बड़े समारोह से तैयारियां की गई थीं। पेट्रोग्रेड के स्टेशन की शोभा देखने ही योग्य थी झण्डे और झण्डियों से पथ भर

था। उसके स्वागत के लिए राजमहल के द्वार खोल दिये गये थे। मिस्टर कैरन्जकी स्वयं फूलों का गुलदस्ता लेकर उसके स्वागत के लिए स्टेशन पर उपस्थित थे। एक दिन जो साइबेरिया और चीन की सीमा पर बन्दिनी होकर घोर कष्ट और नर्क की यंत्रणाओं को सहन कर रही थी, आज उसी के लिए राज-महलों के द्वार खुले हैं। जहां उस समय उसके सीधे खड़े होते ही सिर छत से टकरा जाता था, आज गगनचुम्बी प्रासाद उसी के स्वागत के लिए साभिमान उन्नत मस्तक किये खड़े हैं। राजा को रंक और रंक को राजा बनना किसी को यदि देखना हो, कष्ट के बाद सुख की सच्चाई को जो देखना चाहे, स्वतंत्रता और न्याय को, अपनी विरोधी महान् शक्तियों पर यदि किसी को प्रत्यक्ष विजय देखनी हो, तो कैथराइन के जीवन-चरित्र को पढ़ ले। रूस की दादी की भव्य मूर्ति के दर्शन कर ले। कहते हैं, जिस दिन उसके आने की प्रतीक्षा थी, उस दिन कई कारणों से वह नहीं पहुँच सकी और दूसरे दिन पहुँची।

इस समय वृद्धा दादी कैथराइन स्वतंत्र रूस के सैन्य-स्थानों में जाकर "कर्तव्य-पालन" और "देश-सुधार" की शिक्षा देती फिरती हैं। सिपाहियों पर उनका बड़ा प्रभाव है। परमात्मा ऐसी वीराङ्गना को चिरायु करे।





# रतन्त्र का प्रथम शत्रु

## स्टैन्का राज़िन

रशादूल स्टैन्का राज़िन के जीवन की प्रारम्भिक घटनाएँ अनन्त काल के अनन्त गर्भ में विलीन हो चुकी हैं। उसके जन्म तथा जन्म-स्थान और माता-पिता के विषय में निश्चित रूप से कुछ भी कहना कठिन है। रूसी इतिहास के काले पन्ने उसकी उज्वल बाल लीलाओं से सर्वथा शून्य हैं। ठ पराक्रमी वीर के उदात्त चरित्र से रूस के को अछूता रखने के लिए भगीरथ प्रयत्न किया नों के पुतले, पक्षपाती लेखकों ने उस प्रजाहितैषी । लिखने योग्य चरित्र को काली स्याही से लिखने नहीं किया। शक्तिशालियों को प्रसन्न रखने के ई वीर के आदर्श चरित्र पर खूब मिट्टी उलीची दूषित करने का कोई भी उपाय उठा नहीं रखा । बालक अपने जातीय इतिहास के पन्ने पलटते र वंश के इतिहास पर पहुँचता है, और १६४५ व ज़ार अलैक्सी के राज्यकाल का अध्ययन ं उसे एक भीषण राज्य-विद्रोह की लपटें उठती । उसका मुखिया एक नास्तिक लुटेरा स्टीफेन र व्यक्ति नज़र पड़ता है। उसका दूसरा घृणा न्का भी था। उसके साथ लुटेरों तथा बदमाशों

का एक जत्था था, जिसकी सहायता से वह निरपराध लोगों पर भीषण अत्याचार किया करता था। बड़ी बड़ी बस्तियों को उजाड़ कर तहस-नहस करता फिरता था। लुक-छिप कर इधर उधर लूटमार किया करता था। पर, अन्त को वह पकड़ा गया और कठोर दण्ड से शासित किया गया। जब उसे उसके कर्मों की पूरी सज़ा दी जा चुकी, तो उसे जीवित ही टुकड़े टुकड़े करके पवित्र मास्को नगर में मार डाला गया। प्रधान धर्म-मन्दिर या गिरजाघर ने उसको नास्तिक, ईश्वर-द्रोही तथा देशद्रोही होने की यथा समय घोषणा कर दी। धर्म-प्राण रूसी लोगों का हृदय आज भी उस डाकू और विद्रोही के नाम मात्र से कांप उठता है।

यह है स्टैन्का का संक्षिप्त जीवन-चरित्र, जो रूस के बालकों को पाठशालाओं में पढ़ाया जाता था। और यत्न किया जाता था कि जैसे भी हो, उन बालकों के हृदयों में उस वीर के प्रति घोर घृणा उत्पन्न कर दी जाय। पर, सच तो यह है कि इस प्रकार के रंगे हुए जीवन-चरित्रों में लेखकों और प्रकाशकों के हृदय की कालिमा ही नंगे रूप में झलका करती है। सूर्य पर धूल फेंकने वाले के हाथ पहले ही मिट्टी में सन जाते हैं, और पीछे मुंह पर भी धूल का पड़ना आवश्यक ही है। सूर्य की कान्ति मनुष्य की मुट्ठी भर धूल से कभी ढकी नहीं जा सकती। वस्तुतः, जिस प्रकार स्टैन्का के जीवन-चरित्र को रंगा गया है, उसका उसमें लेश भी नहीं था। वह एक ऐसा अद्भुत कर्मी व्यक्ति था, जिसके जीवन की प्रत्येक घटना जातीय जीवन की अमूल्य सम्पत्ति है। उसको लुटेरा या बदमाश कहना सत्य का अपलाप करना है। उसकी प्रजा-प्रियता का इससे बढ़ कर प्रमाण और क्या होगा कि रूस के बच्चे बच्चे की जिह्वा पर उसका नाम सुनाई देता था। उस समय

की जनता उसे एक देवदूत समझती थी। जातीय संगीतों और भजनों में स्टैन्का के गुणों और नाम की ध्वनि सुनाई देती थी। अधिकारियों के लाख प्रयत्न करने पर भी स्टैन्का का नाम प्रजा के हृत्पटल से नहीं मिटा। स्वेच्छाचारिणी ज़ारशाही के विरुद्ध सब से प्रथम सामूहिक विद्रोह का झण्डा, जिन भुजाओं ने उठाया, वह इसी कज्ज़ाक वीर की थीं। रमनौफ वंश का सिंहासन इसी वीर की हुङ्कार से डगमगाया। ऐसे वीरपुंगव को डाकू और लुटेरा लिख कर निःसन्देह लेखकों ने अपनी लेखनी ही का मुंह काला किया। पाठक, स्वयं उसके जीवन-चरित्र को पढ़कर देखलें कि वह वास्तव में क्या था? स्टैन्का राज़िन के जन्मादि के विषय में इससे अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता कि वह एक उच्च कज़्ज़ाक वंश में उत्पन्न हुआ था। धर्म-मन्दिर या गिरजाघरों का वह पुराने ढंग का कट्टर भक्त था। उसमें एक वीर देश भक्त के सभी गुण विद्यमान थे। अत्याचारी और प्रजा-पीड़क के लिए निःसन्देह वह यमराज था। पर, दीन-दुखियों और आपत्ति-ग्रस्तों के लिए वह दया का अवतार था। १६६१ के लगभग उसे स्थान स्थान पर धर्ममन्दिर बनवाते देखा गया था। यात्रियों के लिए धर्मशालाएं तथा घायलों और पीड़ितों के लिए सैकड़ों अस्पतालों की नींव उसने स्वयं डाली थी। इतने उदार तथा प्रजा-हितैषी को चोर, लुटेरा लिखना मिथ्या प्रलाप नहीं तो और क्या है?

स्टैन्का का सन् १६६१ के पहले का जीवन-चरित्र संसार की आंखों से ओझल है। स्टीफ़न के उन्नतिशील जीवन के ऊषा-काल की झलक पहलेपहल यहीं से दिखाई देती है। जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, धर्मशाला, धर्म-मन्दिर तथा विश्रांति-भवनों के संस्थापक के रूप में सब से प्रथम

इस वीर का नाम इतिहास में सुनाई देता है। इसी समय कुली-प्रथा के विरुद्ध रूस में एक हलचल उठ खड़ी हुई। यह १६ वीं शताब्दी का मध्य-काल था। प्रचलित कुली-प्रथा के कारण प्रजा दिन-बदिन अत्याचारों का शिकार हो रही थी। स्वामियों की उच्छृंखल वृत्ति से जनता घबरा उठी थी। समय के साथ साथ, दुःख-कहानी बढ़ती ही जाती थी। ऐसी स्थिति में जो होना था, वही हुआ। बढ़ते हुए अत्याचारों की पीड़ा प्रजा की सहन शीलता की सीमा का भी उल्लंघन कर गई। अन्त में हलचल ने एक लहर का रूप धारण कर लिया और लहर शीघ्र ही एक भीषण तूफ़ान में परिणत हो गई।

इधर तो यह लहर चल ही रही थी, उधर १६६७ के लगभग धर्माध्यक्ष पादरी धर्म-मन्दिर, सेवा-संघ के नियमों में कुछ परिवर्त्तन कराना चाहते थे। साधारण जनता उसके विरुद्ध थी। पर, पादरियों की अधिकता के कारण प्रजा की कुछ सुनाई नहीं हुई और नियमों में परिवर्तन कर दिया गया। पादरी पेट्रीआर्क निकन ने कुछ अन्य नियमों मे भी छोटा-मोटा परिवर्तन करा दिया। सब संशोधित नियम छपवा कर स्थायी कर दिये गये। परिवर्तित नियमों को स्थायी तथा शीघ्र से शीघ्र कार्य्य में परिणत करने के लिए पादरियों ने राजकीय शक्ति का सहारा लिया। ज़ार से प्रार्थना की गई कि वे इन संशोधित नियमों के यथा सम्भव शीघ्र प्रचार के लिए अपनी ओर से एक घोषणा करा दें। ज़ार अलैक्सी की ओर से घोषणा कर दी गई कि जो इन नवीन संशोधित नियमों को भंग करेगा या इन्हें नहीं मानेगा, उसे धर्म-मन्दिर से पृथक् कर दिया जायगा। जनता पहले ही सरकार से खार खाए बैठी थी। इस घोषणा से गर्म तवा पर छींटा पड़ गया। पोप अवेकुम के नेतृत्व में प्रजा के एक बड़े भारी दल ने उन नियमों

को स्वीकार करने से स्पष्ट इनकार कर दिया । इस प्रकार देश में दो दल हो गये । जिन लोगों ने उन नियमों को मानने से इनकार कर दिया, वे लोग रास्कौलिक्स अर्थात पुराने मत या अपरिवर्तन वादी के नाम से पुकारे जाने लगे । इतिहास में भी वे इसी नाम से प्रसिद्ध हैं। मसल मशहूर है, अधिक दबाने से चिउँटी भी काट खाती है। अत्यन्त सताई हुई तथा पददलित प्रजा सहसा उत्तेजित हो उठी। इस घटना ने छिपी हुई आग में फूंक का काम किया। राख उड़ गई और कोयले दहक उठे। चारों ओर क्रान्ति की आग भड़कने लगी। लोग उत्साह और साहस से भरे हुए दिखाई देते थे। निर्भयता की तो मानों वे मूर्ति ही हो रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि भय किसे कहते हैं, यह वे जानते ही नहीं। स्वतंत्रता की वेदी पर आत्म-समर्पण करने के लिए लोग व्याकुल से फिरते दिखाई देते थे। यह सब कुछ था, पर, किसी अनुभवी और योग्य नेता के न होने के कारण सब उत्साह और शक्तियां अस्तव्यस्त हो रही थीं। ऐसा मालूम होता था कि प्रजा का यह उत्साह, साहस, निर्भयता और आत्मत्याग की उत्कट अभिलाषा व्यर्थ ही नष्ट होजायगी। पर, रूस के सौभाग्य से समय तथा परिस्थिति ने जनता का साथ दिया। समुद्र का मथन बड़े वेग से होरहा था। लहर पर लहर उमड़ती चली आरही थी। उस उमड़ती हुई लहरों के बीच से ऊपर उठता हुआ एक व्यक्ति देखा गया। उस समय से पूर्व उसे संसार में इने गिने लोग ही जानते थे। वह एक कज़्ज़ाक वीर था, जिसकी विशाल भुजा, चौड़ी छाती तथा उन्नत और तेजस्वी ललाट को देखकर सब के सिर उसके आगे झुक गये। उसके झण्डे की छाया में अपना कल्याण देख कर लोगों के झुण्ड के झुण्ड इकट्ठे होने लगे। छोटे छोटे दल

भी उसी में अपना हित समझकर उसके झण्डे के नीचे आ खड़े हुए। रूस के इतिहास में यह पहला ही अवसर था, जब रूस के क्रान्तिकारी दल का एक विशाल सामूहिक संघटन हुआ था।

स्टैन्का की वाणी में कुछ ऐसा ओज था, कि लोग उसके संकेत पर मरने को तैयार होजाते थे। उसकी आकृति में एक ऐसा महान आकर्षण था, जो लोगों को हठात् उसकी ओर खींच लाता था। इसी समय उसने एक घोषणा में लोगों से प्रतिज्ञा की कि वह किसी प्रकार के जातीय ऊँच-नीच के भेद को नहीं मानेगा। वह ज़ारशाही तथा कुलीनप्रथा के समूलोच्छेद और प्रजातंत्र की स्थापना के लिए, जिसमें सब प्रजा के समान अधिकार होंगे, घोर संग्राम करेगा। प्राण रहते वह अपने प्रन से बाल भर भी पीछे नहीं हटेगा। स्टैन्का की इन बातों ने जनता के हृदय पर उसकी अटल भक्ति की छाप लगादी। उसके व्यवहार तथा आचार-विचार ने लोगों को इतना मुग्ध कर दिया कि वे उसे अपने पिता के सदृश मानने लगे। पिता के पद पर भी स्टैन्का को बैठाकर लोगों को सन्तोष नहीं हुआ। उनके हृदयों में कोई बार बार कहने लगा कि यह लौकिक पिता का पद स्टैन्का के लिए पर्याप्त नहीं है, इससे भी बढ़कर यदि कोई आदर का पद हो, तो वह उसे मिलना चाहिए। लोग अपने हृदय के भावों और प्रेम तथा भक्ति के उद्गारों को प्रकट करने के लिए विह्वल हो रहे थे, पर, कोई पद या कोई शब्द उन्हें अपने भावों के अनुरूप नहीं मिलता था। आखिर उन्होंने परमपिता परमात्मा के बाद दूसरा नम्बर स्टैन्का को देकर जैसे तैसे अपने हृदयों को सन्तुष्ट किया। लोग उसे (Batyushka) "छोटा पिता" कहकर पुकारने लगे।

स्टैन्का पदल सेना इकट्ठी करके ही शान्त नहीं हो गया, उसने समुद्र-यात्रा और अन्य जल-मार्गों से जाकर दूसरे स्थानों को विजय करने के लिए छोटे छोटे जहाज़ और जल-सेना भी तैयार की। जिस जिस स्थान को वह विजय करता था, उस उस स्थान से राजकीय कर भी उगाहता जाता था। इस कर ही से सेना का सब व्यय चलता था। १६६८में स्टैन्का ने प्रथम बार अपने जहाज विशाल वोल्गा नदी की छाती पर तैराये। जिस किनारे पर भी ये जहाज़ जा लगते थे, वहीं पर स्टैन्का की पताका उड़ने लगती थी। ज़ारित्सीं तथा येरस के प्रसिद्ध दुर्ग उसने अपने हाथों में कर लिए। स्टैन्का को इस प्रकार विजयी होते देख, लोगों की उसपर अधिकाधिक श्रद्धा बढ़ने लगी। वे उसे अजेय समझने लगे और इसके साथ ही साथ उसका दल भी दिनों दिन बढ़ने लगा। स्टैन्का की इस बढ़ती कला को देखकर ज़ार का सिंहासन डोल उठा। उसकी शक्ति से वह भय-भीत हो उठा। स्टैन्का के सामने आते हुए ज़ार को भय और संदेह दोनों ही होते थे। उधर स्टैन्का दिन पर दिन आगे ही आगे बढ़ता जाता था। उसे रोकना भी अत्यावश्यक था। इसलिए ज़ार ने एक चाल चली। उसने स्टैन्का से कहला भेजा कि यदि वह अधी-नता स्वीकार करले और इस प्रकार लूटमार या आक्रमण करना बन्द करदे, तो वह उसे क्षमा कर देगा। ज़ार के इस प्रस्ताव को स्टैन्का ने घृणा के साथ अस्वीकृत कर दिया। अपनी बात को इस प्रकार ठुकराई जाती देखकर ज़ार को बड़ा क्रोध हो आया। प्रथम तो रूस-राज की ओरसे इस प्रकार का प्रस्ताव होना ही अनुचित था, फिर, स्टैन्का की ओर से उसके इस भांति ठुकराये जाने पर तो रूस-राज का घोर

अपमान हुआ। इस अपमान को न सहन करके ज़ार ने आस्ट्रखान से स्टैन्का पर चढ़ाई करने के लिए अपनी सेना भेज दी। दोनों सेनाओं की बीच हो में मुठभेड़ होगई। घोर संग्राम हुआ। पर, अन्त में ज़ार की सेना को विद्रोहियों के आगे मुंह की खानी पड़ी। सरकारी सेना परास्त होकर भाग खड़ी हुई। ज़ार का भय और सन्देह सत्य ही निकला। इस हार से ज़ार की दशा तो मुंह-कुचले सांप की सी हो गई। उधर विजय से उत्साहित होकर स्टैन्का ने अपने जहाज कास्पियन सागर में छोड़ दिये। दरबन से लेकर बाकू तक परशिया का कुल किनारा बात की बात में उसने विजय कर लिया। उसको इस प्रकार आगे बढ़ते देख, १६६९ की जुलाई में परशिया की सरकार ने उसके मुकाबले के लिए एक जहाजी बेड़ा भेजा। पर, जिस सेना के आगे रूसराज की सेना तक न ठहर सकी, वहां इस छोटे से दल की क्या गिनती थी। परशिया के बेड़े को भाग कर जान बचानी पड़ी। कुछ समय तक समुद्र की विस्तृत छाती पर विजय-पताका उड़ाते हुए अन्त को स्टैन्का आस्ट्रखान को लौट आया।

इस प्रकार रूस के दक्षिण पूर्व का लगभग कुल भाग अपने हाथ में करके, स्टैन्का ने अपनी सेना का मुख डान की ओर फिराया। डान की ओर बढ़ते हुए स्टैन्का की भेंट एक और कज़्ज़ाक वीर से होगई। उसका नाम वास्कल था। मध्य रूस में इस वीर ने भारी विजय प्राप्त की थी। तूला और वारोनेज़ के प्रान्तों में उसने बहुत ही लूट-मार की थी। इसके साथ मिल जाने से स्टैन्का की शक्ति और भी बढ़ गई। इसी बीच में दो बार सरकारी सेना के साथ स्टैन्का को मोर्चा लेना पड़ा। दोनों ही लड़ाइयों में स्टैन्का विजयी हुआ। जिस समय स्टैन्का अपने मार्ग में बड़े वेग से आगे बढ़ रहा था, उस समय आस्ट्रखान के गव-